हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥
जयति शिवा-शिव जानकि-राम। जय रघुनन्दन जय सियाराम ॥
रघुपति राघव राजा राम। पतितपावन सीताराम ॥
जय जय दुर्गा जय माँ तारा। जय गणेश जय शुभ आगारा ॥

[संस्करण ९१,३००]

विषय-सूची

कल्याण, मई सन् १९४५ की

संकलित

चित्र-सूची

तिरंगा

इकरंगे (लाइन)

वार्षिक मूल्य
भारतमें ४≡)
विदेशमें ६॥=)
(१० शिलिङ्ग)

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत् चित् आनँद भूमा जय जय ॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥
जय विराट जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते ॥

साधारण प्रति
भारतमें ।)
विदेशमें ।≡)
(८ पैंस)

Edited by H. P. Poddar and C. L. Goswami, M. A., Shastri.
Printed and Published by Ghanshyamdas Jalan at the Gita Press, Gorakhpur, U. P. (India)

महादेवजीके द्वारा पार्वतीको श्रीविष्णुसहस्रनामका उपदेश

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
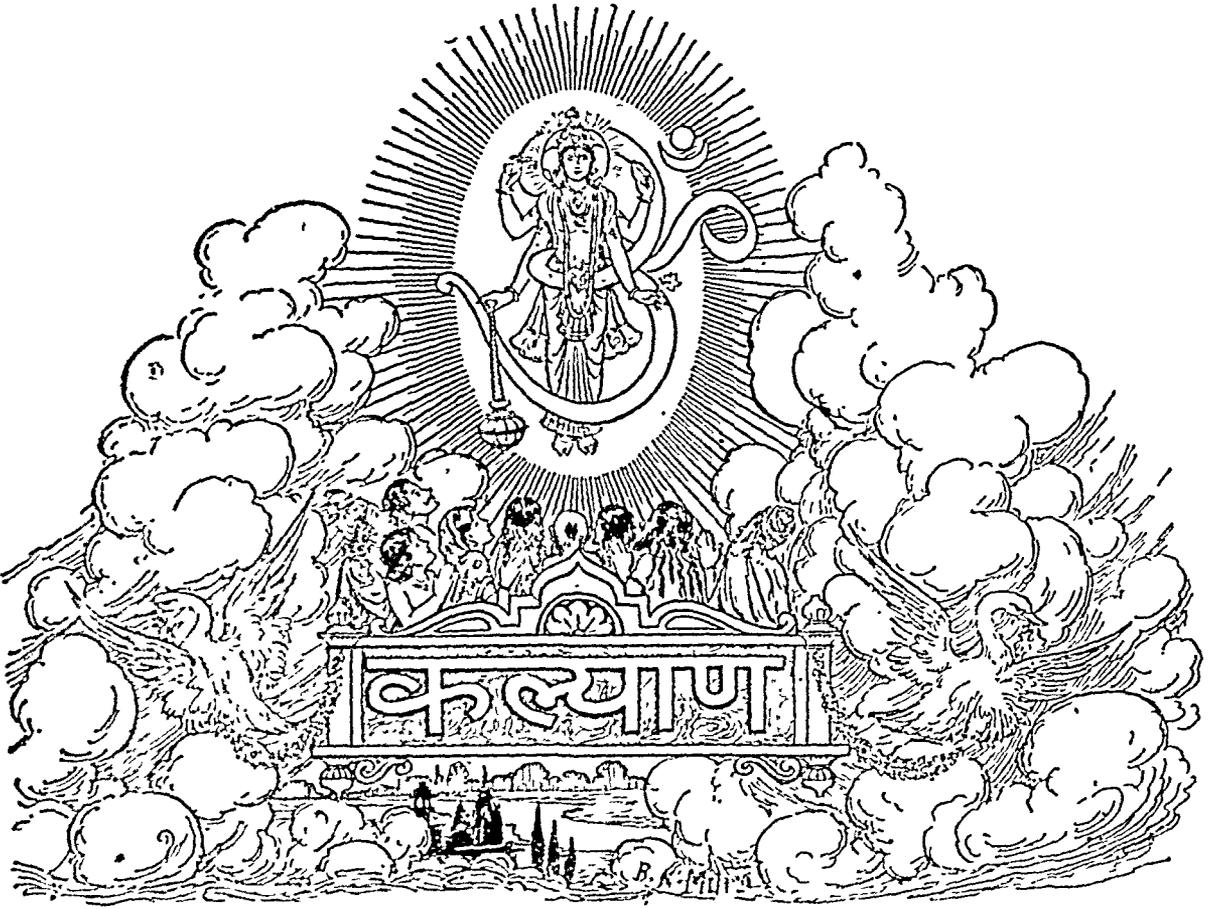
कृष्णं च रामं शरणं व्रजन्ति जपन्ति जाप्यैः परिपूजयन्ति ।
दण्डप्रणामैः प्रणमन्ति विष्णुं तद्ध्यानयुक्ताः परिवैष्णवास्ते ॥

वर्ष १९ } गोरखपुर, मई १९४५, सौर वैशाख २००२ { संख्या ८
पूर्ण संख्या २२४

मोहानलसज्ज्वालाज्ज्वलँल्लोकेषु सर्वदा ।
यन्नामाम्भोधरच्छायां प्रविष्टो न तु दह्यते ॥
प्रयाणे वाऽप्रयाणे वा यन्नाम स्मरतां नृणाम् ।
सद्यो नश्यति पापौघो नमस्तस्मै चिदात्मने ॥

(पद्म० उत्तर० २४९ । ८७-८८)

'संसारके भीतर मोहरूपी अग्निकी धधकती हुई ज्वालासे झुलसता हुआ मनुष्य जिनके नामरूपी मेघोंकी छत्रछायामें प्रवेश करनेपर दाहसे बच जाता है । प्रयाण अथवा अप्रयाणके समय जिनके नामका स्मरण करनेवाले मानवोंकी पापराशि तत्काल नष्ट हो जाती है, उन चित्स्वरूप भगवान् नारायणको नमस्कार है ।'

श्रीहरिका स्तवन

जन्मादिरहितं पूर्वं चित्सदानन्दलक्षणम् ।
त्वामौपनिषदा ब्रह्म चिन्तयन्ति परात्परम् ॥
खादिभूतानि देहश्च मनो बुद्धीन्द्रियाणि च ।
विद्याविद्ये त्वमेवात्र नान्यत्त्वत्तोऽस्ति किंचन ॥
त्वमग्निस्त्वं हविस्त्वं स्रुग्दीक्षितानां क्रिया क्षमा ।
त्वं सेतुः सर्वभूतानां त्वमेव शरणं मम ॥
युवतीनां यथा यूनि यूनां च युवतौ यथा ।
मनोऽभिरमते तद्वन्मनो मे रमतां त्वयि ॥
अपि पापं दुराचारं नरं त्वां प्रणतं हरे ।
नेक्षन्ते किङ्करा याम्या उलूकास्तपनं यथा ॥
तापत्रयमघौघश्च तावत्पीडयते जनम् ।
यावन्नाश्रयते मर्त्यो भक्त्या त्वत्पादपङ्कजम् ॥

(पद्म० उत्तर० २४९ । १०६—१११)

'भगवन् ! उपनिषदोंके विद्वान् आपको जन्म आदिसे रहित, सबके पूर्ववर्ती, सच्चिदानन्दस्वरूप तथा परात्पर ब्रह्म मानकर चिन्तन करते हैं। आकाश आदि पाँचों भूत, देह, मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ, विद्या और अविद्या सब कुछ आप ही हैं। इस जगत्में आपसे भिन्न दूसरी किसी भी वस्तुकी सत्ता नहीं है। आप ही अग्नि, आप ही हविष्य, आप ही स्रुवा तथा आप ही यज्ञमें दीक्षित पुरुषोंके लिये क्रिया और क्षमा हैं। आप ही सब प्राणियोंके लिये सेतु हैं तथा आप ही मेरे आश्रय हैं। नाथ ! जैसे युवती स्त्रियोंका मन युवा पुरुषमें और युवा पुरुषोंका मन युवती स्त्रीमें रमता है, उसी प्रकार मेरा मन आपमें रमण करे। हरे ! पापी और दुराचारी मनुष्य भी यदि आपके चरणोंमें पड़ जाता है तो यमराजके दूत उसकी ओर ठीक उसी प्रकार नहीं देख पाते, जैसे उल्लू सूर्यकी ओर दृष्टि नहीं डाल सकते। मनुष्यको पापोंकी राशि तथा तीनों ताप तभीतक पीड़ा देते हैं, जबतक वह भक्तिपूर्वक आपके चरणकमलोंकी शरण नहीं लेता।'

आश्विन मासकी 'इन्दिरा' और 'पापाङ्कुशा' एकादशीका माहात्म्य

युधिष्ठिरने पूछा—मधुसूदन ! कृपा करके मुझे यह बताइये कि आश्विनके कृष्णपक्षमें कौन-सी एकादशी होती है ?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन् ! आश्विन कृष्ण-पक्षमें 'इन्दिरा' नामकी एकादशी होती है, उसके व्रतके प्रभावसे बड़े-बड़े पापोंका नाश हो जाता है। नीच योनिमें पड़े हुए पितरोंको भी यह एकादशी सद्गति देनेवाली है।

राजन् ! पूर्वकालकी बात है, सत्ययुगमें इन्द्रसेन नामसे विख्यात राजकुमार थे, जो अब माहिष्मतीपुरीके राजा होकर धर्मपूर्वक प्रजाका पालन करते थे। उनका यश सब ओर फैल चुका था। राजा इन्द्रसेन भगवान् विष्णुकी भक्तिमें तत्पर हो गोविन्दके मोक्षदायक नामोंका जप करते हुए समय व्यतीत करते थे और विधिपूर्वक अध्यात्मतत्त्वके चिन्तनमें संलग्न रहते थे। एक दिन राजा राजसभामें सुखपूर्वक बैठे हुए थे, इतनेहीमें देवर्षि नारद आकाशसे उतरकर वहाँ आ पहुँचे। उन्हें आया देख राजा हाथ जोड़कर खड़े हो गये और विधिपूर्वक पूजन करके उन्हें आसनपर बिठाया, इसके बाद वे इस प्रकार बोले—'मुनिश्रेष्ठ !

आपकी कृपासे मेरी सर्वथा कुशल है। आज आपके दर्शनसे मेरी सम्पूर्ण यज्ञ-क्रियाएँ सफल हो गयीं। देवर्षे ! अपने आगमनका कारण बताकर मुझपर कृपा करें।'

नारदजीने कहा—नृपश्रेष्ठ ! सुनो, मेरी बात तुम्हें आश्चर्यमें डालनेवाली है, मैं ब्रह्मलोकसे यमलोकमें आया था, वहाँ एक श्रेष्ठ आसनपर बैठा और यमराजने मेरी भक्तिपूर्वक पूजा की। उस समय यमराजकी सभामें मैंने तुम्हारे पिताको भी देखा था। वे व्रतभंगके दोषसे वहाँ आये थे। राजन् ! उन्होंने तुमसे कहनेके लिये एक सन्देश दिया है, उसे सुनो। उन्होंने कहा है, 'बेटा ! मुझे 'इन्दिरा' के व्रतका पुण्य देकर स्वर्गमें भेजो।' उनका यह सन्देश लेकर मैं तुम्हारे पास आया हूँ। राजन् ! अपने पिताको स्वर्गलोककी प्राप्ति करानेके लिये 'इन्दिरा' का व्रत करो।

राजाने पूछा—भगवन् ! कृपा करके 'इन्दिरा' का व्रत बताइये। किस पक्षमें, किस तिथिको और किस विधिसे उसका व्रत करना चाहिये।

नारदजीने कहा—राजेन्द्र ! सुनो, मैं तुम्हें इस व्रतकी शुभकारक विधि बतलाता हूँ। आश्विन मासके कृष्णपक्षमें दशमीके उत्तम दिनको श्रद्धायुक्त चित्तसे प्रातः-काल स्नान करे। फिर मध्याह्नकालमें स्नान करके एकाग्र-चित्त हो एक समय भोजन करे तथा रात्रिमें भूमिपर सोवे। रात्रिके अन्तमें निर्मल प्रभात होनेपर एकादशीके दिन दातुन करके मुँह धोये; इसके बाद भक्तिभावसे निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़ते हुए उपवासका नियम ग्रहण करे—

अद्य स्थित्वा निराहारः सर्वभोगविवर्जितः ।
श्वो भोक्ष्ये पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥
(६०।२३)

'कमलनयन भगवान् नारायण ! आज मैं सब भोगोंसे अलग हो निराहार रहकर कल भोजन करूँगा। अच्युत ! आप मुझे शरण दें।'

इस प्रकार नियम करके मध्याह्नकालमें पितरोंकी प्रसन्नताके लिये शालग्राम-शिलाके सम्मुख विधिपूर्वक श्राद्ध करे तथा दक्षिणासे ब्राह्मणोंका सत्कार करके उन्हें भोजन करावे। पितरोंको दिये हुए अन्नमय पिण्डको सूँघकर विद्वान् पुरुष

गायको खिला दे। फिर धूप और गन्ध आदिसे भगवान् हृषीकेशका पूजन करके रात्रिमें उनके समीप जागरण करे। तत्पश्चात् सबेरा होनेपर द्वादशीके दिन पुनः भक्तिपूर्वक श्रीहरिकी पूजा करे। उसके बाद ब्राह्मणोंको भोजन कराकर भाई-बन्धु, नाती और पुत्र आदिके साथ स्वयं मौन होकर भोजन करे। राजन्! इस विधिसे आलस्यरहित होकर तुम 'इन्दिरा' का व्रत करो। इससे तुम्हारे पितर भगवान् विष्णुके वैकुण्ठधाममें चले जायँगे।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—राजन्! राजा इन्द्रसेनसे ऐसा कहकर देवर्षि नारद अन्तर्धान हो गये। राजाने उनकी बतायी हुई विधिसे अन्तःपुरकी रानियों, पुत्रों और भृत्योंसहित उस उत्तम व्रतका अनुष्ठान किया। कुन्तीनन्दन! व्रत पूर्ण होनेपर आकाशसे फूलोंकी वर्षा होने लगी। इन्द्रसेनके पिता गरुड़पर आरूढ़ होकर श्रीविष्णुधामको चले गये और राजर्षि इन्द्रसेन भी अकण्टक राज्यका उपभोग करके अपने पुत्रको राज्यपर बिठाकर स्वयं स्वर्गलोकको गये। इस प्रकार मैंने तुम्हारे सामने 'इन्दिरा' व्रतके माहात्म्यका वर्णन किया है। इसको पढ़ने और सुननेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है।

युधिष्ठिरने पूछा—मधुसूदन! अब कृपा करके यह बताइये कि आश्विनके शुक्लपक्षमें किस नामकी एकादशी होती है?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन्! आश्विनके शुक्लपक्षमें जो एकादशी होती है, वह 'पापाङ्कुशा' के नामसे विख्यात है। वह सब पापोंको हरनेवाली तथा उत्तम है। उस दिन सम्पूर्ण मनोरथकी प्राप्तिके लिये मनुष्योंको स्वर्ग और मोक्ष प्रदान करनेवाले पद्मनाभसंज्ञक मुझ वासुदेवका पूजन करना चाहिये। जितेन्द्रिय मुनि चिरकालतक कठोर तपस्या करके जिस फलको प्राप्त करता है, वह उस दिन भगवान् गरुड़ध्वजको प्रणाम करनेसे ही मिल जाता है। पृथ्वीपर जितने तीर्थ और पवित्र देवालय हैं, उन सबके सेवनका फल भगवान् विष्णुके नामकीर्तनमात्रसे मनुष्य प्राप्त कर लेता है। जो शार्ङ्गधनुष धारण करनेवाले सर्वव्यापक भगवान् जनार्दनकी शरणमें जाते हैं, उन्हें कभी यमलोककी यातना नहीं भोगनी पड़ती। यदि अन्य कार्यके प्रसङ्गसे भी मनुष्य एकमात्र एकादशीको उपवास कर ले तो उसे कभी यम-यातना नहीं प्राप्त होती। जो पुरुष विष्णुभक्त होकर भगवान् शिवकी निन्दा करता है, वह भगवान् विष्णुके लोकमें स्थान नहीं पाता; उसे निश्चय ही नरकमें गिरना पड़ता है। इसी प्रकार यदि कोई शैव या पाशुपत होकर भगवान् विष्णुकी निन्दा करता है तो वह घोर रौरव नरकमें डालकर तबतक पकाया जाता है, जबतक कि चौदह इन्द्रोंकी आयु पूरी नहीं हो जाती। यह एकादशी स्वर्ग और मोक्ष प्रदान करनेवाली, शरीरको नीरोग बनानेवाली तथा सुन्दर स्त्री, धन एवं मित्र देनेवाली है। राजन्! एकादशीको दिनमें उपवास और रात्रिमें जागरण करनेसे अनायास ही विष्णुधामकी प्राप्ति हो जाती है। राजेन्द्र! वह पुरुष मातृ-पक्षकी दस, पिताके पक्षकी दस तथा स्त्रीके पक्षकी भी दस पीढ़ियोंका उद्धार कर देता है। एकादशी व्रत करनेवाले मनुष्य दिव्यरूपधारी, चतुर्भुज, गरुड़की ध्वजासे युक्त, हारसे सुशोभित और पीताम्बरधारी होकर भगवान् विष्णुके धामको जाते हैं। आश्विनके शुक्लपक्षमें पापाङ्कुशाका व्रत करने मात्रसे ही मानव सब पापोंसे मुक्त हो श्रीहरिके लोकमें जाता है। जो पुरुष सुवर्ण, तिल, भूमि, गौ, अन्न, जल, जूते और छातेका दान करता है, वह कभी यमराजको नहीं देखता। नृपश्रेष्ठ! दरिद्र पुरुषको भी चाहिये कि वह यथाशक्ति स्नान-दान आदि क्रिया करके अपने प्रत्येक दिनको सफल बनावे।* जो होम, स्नान, जप, ध्यान और यज्ञ आदि पुण्यकर्म करनेवाले हैं, उन्हें भयंकर यमयातना नहीं देखनी पड़ती। लोकमें जो मानव दीर्घायु, धनाढ्य, कुलीन और नीरोग देखे जाते हैं, वे पहलेके पुण्यात्मा हैं। पुण्यकर्ता पुरुष ऐसे ही देखे जाते हैं। इस विषयमें अधिक कहनेसे क्या लाभ, मनुष्य पापसे दुर्गतिमें पड़ते हैं और धर्मसे स्वर्गमें जाते हैं। राजन्! तुमने मुझसे जो कुछ पूछा था, उसके अनुसार पापाङ्कुशाका माहात्म्य मैंने वर्णन किया; अब और क्या सुनना चाहते हो?

---

* अवन्ध्यं दिवसं कुर्याद् दरिद्रोऽपि नृपोत्तम। समाचरन् यथाशक्ति स्नानदानादिकाः क्रियाः॥

(६१। २४-२५)

कार्तिकमासकी 'रमा' और 'बोधिनी' एकादशीका माहात्म्य

युधिष्ठिरने पूछा—जनार्दन! मुझपर आपका स्नेह है; अतः कृपा करके बताइये। कार्तिकके कृष्णपक्षमें कौन-सी एकादशी होती है?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन्! कार्तिकके कृष्ण-पक्षमें जो परम कल्याणमयी एकादशी होती है, वह 'रमा' के नामसे विख्यात है। 'रमा' परम उत्तम है और बड़े-बड़े पापोंको हरनेवाली है।

पूर्वकालमें मुचुकुन्द नामसे विख्यात एक राजा हो चुके हैं, जो भगवान् श्रीविष्णुके भक्त और सत्यप्रतिज्ञ थे। निष्कण्टक राज्यका शासन करते हुए उस राजाके यहाँ नदियोंमें श्रेष्ठ चन्द्रभागा कन्याके रूपमें उत्पन्न हुई। राजाने चन्द्रसेनकुमार शोभनके साथ उसका विवाह कर दिया। एक समयकी बात है, शोभन अपने ससुरके घर आये। उनके यहाँ दशमीका दिन आनेपर समूचे नगरमें ढिंढोरा पिटवाया जाता था कि एकादशीके दिन कोई भी भोजन न करे, कोई भी भोजन न करे। यह डंकेकी घोषणा सुनकर शोभनने अपनी प्यारी पत्नी चन्द्र-भागासे कहा—'प्रिये! अब मुझे इस समय क्या करना चाहिये, इसकी शिक्षा दो।'

चन्द्रभागा बोली—प्रभो! मेरे पिताके घरपर तो एकादशीको कोई भी भोजन नहीं कर सकता। हाथी, घोड़े, हाथियोंके बच्चे तथा अन्यान्य पशु भी अन्न, घास तथा जलतकका आहार नहीं करने पाते; फिर मनुष्य एकादशी-के दिन कैसे भोजन कर सकते हैं। प्राणनाथ! यदि आप भोजन करेंगे तो आपकी बड़ी निन्दा होगी। इस प्रकार मनमें विचार करके अपने चित्तको दृढ़ कीजिये।

शोभनने कहा—प्रिये! तुम्हारा कहना सत्य है, मैं भी आज उपवास करूँगा। दैवका जैसा विधान है, वैसा ही होगा।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके शोभनने व्रतके नियमका पालन किया। क्षुधासे उनके शरीरमें पीड़ा होने लगी; अतः वे बहुत दुखी हुए। भूखकी चिन्तामें पड़े-पड़े सूर्यास्त हो गया। रात्रि आयी, जो हरि-पूजापरायण तथा जागरणमें आसक्त वैष्णव मनुष्योंका हर्ष बढ़ानेवाली थी; परन्तु वही रात्रि शोभनके लिये अत्यन्त दुःखदायिनी हुई। सूर्योदय होते-होते उनका प्राणान्त हो गया। राजा मुचुकुन्दने राजोचित काष्ठोंसे शोभनका दाह-संस्कार कराया। चन्द्रभागा पतिका पारलौकिक कर्म करके पिताके ही घरपर रहने लगी। नृपश्रेष्ठ! 'रमा' नामक एकादशीके व्रतके प्रभावसे शोभन मन्दराचलके शिखरपर बसे हुए परम रमणीय देवपुरको प्राप्त हुआ। वहाँ शोभन द्वितीय कुबेरकी भाँति शोभा पाने लगा। राजा मुचुकुन्दके नगरमें सोमशर्मा नामसे विख्यात एक ब्राह्मण रहते थे, वे तीर्थयात्राके प्रसङ्गसे घूमते हुए कभी मन्दराचल पर्वतपर गये। वहाँ उन्हें शोभन दिखायी दिये। राजाके दामादको पहचानकर वे उनके समीप गये। शोभन भी उस समय द्विजश्रेष्ठ सोमशर्माको आया जान शीघ्र ही आसनसे उठकर खड़े हो गये और उन्हें प्रणाम किया। फिर क्रमशः अपने

श्वशुर राजा मुचुकुन्दका, प्रिय पत्नी चन्द्रभागाका तथा समस्त नगरका कुशल-समाचार पूछा।

सोमशर्माने कहा—राजन्! वहाँ सबकी कुशल है।

यहाँ तो अद्भुत आश्चर्यकी बात है! ऐसा सुन्दर और विचित्र नगर तो कहीं किसीने भी नहीं देखा होगा। बताओ तो सही, तुम्हें इस नगरकी प्राप्ति कैसे हुई ?

शोभन बोले–द्विजेन्द्र! कार्तिकके कृष्णपक्षमें जो 'रमा' नामकी एकादशी होती है, उसीका व्रत करनेसे मुझे ऐसे नगरकी प्राप्ति हुई है। ब्रह्मन्! मैंने श्रद्धाहीन होकर इस उत्तम व्रतका अनुष्ठान किया था; इसलिये मैं ऐसा मानता हूँ कि यह नगर सदा स्थिर रहनेवाला नहीं है। आप मुचुकुन्दकी सुन्दरी कन्या चन्द्रभागासे यह सारा वृत्तान्त कहियेगा।

शोभनकी बात सुनकर सोमशर्मा ब्राह्मण मुचुकुन्दपुरमें गये और वहाँ चन्द्रभागाके सामने उन्होंने सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

सोमशर्मा बोले–शुभे! मैंने तुम्हारे पतिको प्रत्यक्ष देखा है तथा इन्द्रपुरीके समान उनके दुर्धर्ष नगरका भी अवलोकन किया है। वे उसे अस्थिर बतलाते थे। तुम उसको स्थिर बनाओ।

चन्द्रभागाने कहा–ब्रह्मर्षे! मेरे मनमें पतिके दर्शनकी लालसा लगी हुई है। आप मुझे वहाँ ले चलिये। मैं अपने व्रतके पुण्यसे उस नगरको स्थिर बनाऊँगी।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–राजन्! चन्द्रभागाकी बात सुनकर सोमशर्मा उसे साथ ले मन्दराचल पर्वतके निकट वामदेव मुनिके आश्रमपर गये। वहाँ ऋषिके मन्त्रकी शक्ति तथा एकादशी-सेवनके प्रभावसे चन्द्रभागाका शरीर दिव्य हो गया तथा उसने दिव्य गति प्राप्त कर ली। इसके बाद वह पतिके समीप गयी। उस समय उसके नेत्र हर्षोल्लाससे खिल रहे थे। अपनी प्रिय पत्नीको आयी देख शोभनको बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने उसे बुलाकर अपने वामभागमें सिंहासनपर बिठाया; तदनन्तर चन्द्रभागाने हर्षमें भरकर अपने प्रियतमसे यह प्रिय वचन कहा—'नाथ! मैं हितकी बात कहती हूँ, सुनिये। पिताके घरमें रहते समय जब मेरी अवस्था आठ वर्षसे अधिक हो गयी, तभीसे लेकर आजतक मैंने जो एकादशीके व्रत किये हैं और उनसे मेरे भीतर जो पुण्य सञ्चित हुआ है, उसके प्रभावसे यह नगर कल्पके अन्ततक स्थिर रहेगा तथा सब प्रकारके मनोवाञ्छित वैभवसे समृद्धिशाली होगा।'

नृपश्रेष्ठ! इस प्रकार 'रमा' व्रतके प्रभावसे चन्द्रभागा दिव्य भोग, दिव्य रूप और दिव्य आभरणोंसे विभूषित हो अपने पतिके साथ मन्दराचलके शिखरपर विहार करती है। राजन्! मैंने तुम्हारे समक्ष 'रमा' नामक एकादशीका वर्णन किया है। यह चिन्तामणि तथा कामधेनुके समान सब मनोरथोंको पूर्ण करनेवाली है। मैंने दोनों पक्षोंके एकादशी-व्रतोंका पापनाशक माहात्म्य बताया है। जैसी कृष्णपक्षकी एकादशी है, वैसी ही शुक्लपक्षकी भी है; उनमें भेद नहीं करना चाहिये। जैसे सफेद रंगकी गाय हो या काले रंगकी, दोनोंका दूध एक-सा ही होता है; इसी प्रकार दोनों पक्षोंकी एकादशियाँ समान फल देनेवाली हैं। जो मनुष्य एकादशी व्रतोंका माहात्म्य सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो श्रीविष्णु-लोकमें प्रतिष्ठित होता है।

युधिष्ठिरने पूछा–श्रीकृष्ण! मैंने आपके मुखसे 'रमा' का यथार्थ माहात्म्य सुना। मानद! अब कार्तिक शुक्ल-पक्षमें जो एकादशी होती है; उसकी महिमा बताइये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले–राजन्! कार्तिकके शुक्ल-पक्षमें जो एकादशी होती है, उसका जैसा वर्णन लोकस्रष्टा ब्रह्माजीने नारदजीसे किया था; वही मैं तुम्हें बतलाता हूँ।

नारदजीने कहा–पिताजी! जिसमें धर्म-कर्ममें प्रवृत्ति करानेवाले भगवान् गोविन्द जागते हैं, उस 'प्रबोधिनी' एकादशीका माहात्म्य बतलाइये।

ब्रह्माजी बोले–मुनिश्रेष्ठ! 'प्रबोधिनी' का माहात्म्य पापका नाश, पुण्यकी वृद्धि तथा उत्तम बुद्धिवाले पुरुषोंको मोक्ष प्रदान करनेवाला है। समुद्रसे लेकर सरोवरतक जितने भी तीर्थ हैं, वे सभी अपने माहात्म्यकी तभीतक गर्जना करते हैं, जबतक कि कार्तिक मासमें भगवान् विष्णुकी 'प्रबोधिनी' तिथि नहीं आ जाती। 'प्रबोधिनी' एकादशीको एक ही उपवास कर लेनेसे मनुष्य हजार अश्वमेध तथा सौ राजसूय यज्ञका फल पा लेता है। बेटा! जो दुर्लभ है, जिसकी प्राप्ति असम्भव है तथा जिसे त्रिलोकीमें किसीने भी नहीं देखा है; ऐसी वस्तुके लिये भी याचना करनेपर 'प्रबोधिनी' एकादशी उसे देती है। भक्तिपूर्वक उपवास करनेपर मनुष्योंको 'हरिबोधिनी' एकादशी ऐश्वर्य, सम्पत्ति, उत्तम बुद्धि, राज्य तथा सुख प्रदान करती है। मेरुपर्वतके समान जो बड़े-बड़े पाप हैं, उन सबको यह पापनाशिनी 'प्रबोधिनी' एक ही उपवाससे भस्म कर देती है। पहलेके

हजारों जन्मोंमें जो पाप किये गये हैं, उन्हें 'प्रबोधिनी' की रात्रिका जागरण रूईकी ढेरीके समान भस्म कर डालता है। जो लोग 'प्रबोधिनी' एकादशीका मनसे ध्यान करते तथा जो इसके व्रतका अनुष्ठान करते हैं, उनके पितर नरकके दुःखोंसे छुटकारा पाकर भगवान् विष्णुके परमधामको चले जाते हैं। ब्रह्मन्! अश्वमेध आदि यज्ञोंसे भी जिस फलकी प्राप्ति कठिन है, वह 'प्रबोधिनी' एकादशीको जागरण करनेसे अनायास ही मिल जाता है। सम्पूर्ण तीर्थोंमें नहाकर सुवर्ण और पृथ्वी दान करनेसे जो फल मिलता है, वह श्रीहरिके निमित्त जागरण करनेमात्रसे मनुष्य प्राप्त कर लेता है। जैसे मनुष्योंके लिये मृत्यु अनिवार्य है, उसी प्रकार धन-सम्पत्तिमात्र भी क्षणभङ्गुर है; ऐसा समझकर एकादशीका व्रत करना चाहिये। तीनों लोकोंमें जो कोई भी तीर्थ सम्भव हैं, वे सब 'प्रबोधिनी' एकादशीका व्रत करनेवाले मनुष्यके घरमें मौजूद रहते हैं। कार्तिककी 'हरिबोधिनी' एकादशी पुत्र तथा पौत्र प्रदान करनेवाली है। जो 'प्रबोधिनी' की उपासना करता है, वही ज्ञानी है, वही योगी है, वही तपस्वी और जितेन्द्रिय है तथा उसीको भोग और मोक्षकी प्राप्ति होती है।

बेटा! 'प्रबोधिनी' एकादशीको भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे मानव जो स्नान, दान, जप और होम करता है, वह सब अक्षय होता है। जो मनुष्य उस तिथिको उपवास करके भगवान् माधवकी भक्तिपूर्वक पूजा करते हैं, वे सौ जन्मोंके पापोंसे छुटकारा पा जाते हैं। इस व्रतके द्वारा देवेश्वर जनार्दनको सन्तुष्ट करके मनुष्य सम्पूर्ण दिशाओंको अपने तेजसे प्रकाशित करता हुआ श्रीहरिके वैकुण्ठ धामको जाता है। 'प्रबोधिनी' को पूजित होनेपर भगवान् गोविन्द मनुष्योंके बचपन, जवानी और बुढ़ापेमें किये हुए सौ जन्मोंके पापोंको, चाहे वे अधिक हों या कम, धो डालते हैं। अतः सर्वथा प्रयत्न करके सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फलोंको देनेवाले देवाधिदेव जनार्दनकी उपासना करनी चाहिये। बेटा नारद! जो भगवान् विष्णुके भजनमें तत्पर होकर कार्तिकमें पराये अन्नका त्याग करता है, वह चान्द्रायण व्रतका फल पाता है। जो प्रतिदिन शास्त्रीय चर्चासे मनोरञ्जन करते हुए कार्तिक मास व्यतीत करता है, वह अपने सम्पूर्ण पापोंको जला डालता और दस हजार यज्ञोंका फल प्राप्त करता है। कार्तिक मासमें शास्त्रीय कथाके कहने-सुननेसे भगवान् मधुसूदनको जैसा सन्तोष होता है, वैसा उन्हें यज्ञ, दान अथवा जप आदिसे भी नहीं होता। जो शुभकर्म-परायण पुरुष कार्तिक मासमें एक या आधा श्लोक भी भगवान् विष्णुकी कथा बाँचते हैं, उन्हें सौ गोदानका फल मिलता है। महामुने! कार्तिकमें भगवान् केशवके सामने शास्त्रका स्वाध्याय तथा श्रवण करना चाहिये। मुनिश्रेष्ठ! जो कार्तिकमें कल्याण-प्राप्तिके लोभसे श्रीहरिकी कथाका प्रबन्ध करता है, वह अपनी सौ पीढ़ियोंको तार देता है। जो मनुष्य सदा नियमपूर्वक कार्तिक मासमें भगवान् विष्णुकी कथा सुनता है, उसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। जो 'प्रबोधिनी' एकादशीके दिन श्रीविष्णुकी कथा श्रवण करता है, उसे सातों द्वीपोंसे युक्त पृथ्वी दान करनेका फल प्राप्त होता है। मुनिश्रेष्ठ! जो भगवान् विष्णुकी कथा सुनकर अपनी शक्तिके अनुसार कथा-वाचककी पूजा करते हैं, उन्हें अक्षय लोककी प्राप्ति होती है। नारद! जो मनुष्य कार्तिक मासमें भगवत्संबन्धी गीत और शास्त्रविनोदके द्वारा समय बिताता है, उसकी पुनरावृत्ति मैंने नहीं देखी है। मुने! जो पुण्यात्मा पुरुष भगवान्के समक्ष गान, नृत्य, वाद्य और श्रीविष्णुकी कथा करता है, वह तीनों लोकोंके ऊपर विराजमान होता है।

मुनिश्रेष्ठ! कार्तिककी 'प्रबोधिनी' एकादशीके दिन बहुत-से फल-फूल, कपूर, अरगजा और कुङ्कुमके द्वारा श्रीहरिकी पूजा करनी चाहिये। एकादशी आनेपर धनकी कंजूसी नहीं करनी चाहिये; क्योंकि उस दिन दान आदि करनेसे असंख्य पुण्यकी प्राप्ति होती है। 'प्रबोधिनी' को जागरणके समय शङ्खमें जल लेकर फल तथा नाना प्रकारके द्रव्योंके साथ श्रीजनार्दनको अर्घ्य देना चाहिये। सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करने और सब प्रकारके दान देनेसे जो फल मिलता है, वही 'प्रबोधिनी' एकादशीको अर्घ्य देनेसे करोड़ गुना होकर प्राप्त होता है। देवर्षे! अर्घ्यके पश्चात् भोजन-आच्छादन और दक्षिणा आदिके द्वारा भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये गुरुकी पूजा करनी चाहिये। जो मनुष्य उस दिन श्रीमद्भागवतकी कथा सुनता अथवा पुराणका पाठ करता है, उसे एक-एक अक्षरपर कपिलादानका फल मिलता है। मुनिश्रेष्ठ! कार्तिकमें जो मनुष्य अपनी शक्तिके अनुसार शास्त्रोक्त रीतिसे वैष्णवव्रत (एकादशी) का पालन करता है, उसकी मुक्ति अविचल है। केतकीके एक पत्तेसे पूजित होनेपर भगवान् गरुड़ध्वज एक हजार वर्षतक अत्यन्त तृप्त रहते हैं। देवर्षे! जो अगस्तके फूलसे भगवान् जनार्दनकी पूजा करता है, उसके दर्शनमात्रसे नरककी आग बुझ जाती है। वत्स! जो कार्तिकमें भगवान् जनार्दन-

को तुलसीके पत्र और पुष्प अर्पण करते हैं, उनका जन्म-भरका किया हुआ सारा पाप भस्म हो जाता है। मुने ! जो प्रतिदिन दर्शन, स्पर्श, ध्यान, नाम-कीर्तन, स्तवन, अर्पण, सेचन, नित्यपूजन तथा नमस्कारके द्वारा तुलसीमें नव प्रकारकी भक्ति करते हैं, वे कोटि सहस्र युगोंतक पुण्यका विस्तार करते हैं।* नारद ! सब प्रकारके फूलों और पत्तोंको चढ़ानेसे जो फल होता है, वह कार्तिक मासमें तुलसीके एक पत्तेसे मिल जाता है। कार्तिक आया देख प्रतिदिन नियमपूर्वक तुलसीके कोमल पत्तोंसे महाविष्णु श्रीजनार्दनका पूजन करना चाहिये। सौ यज्ञोंद्वारा देवताओंका यजन करने और अनेक प्रकारके दान देनेसे जो पुण्य होता है, वह कार्तिकमें तुलसीदल मात्रसे केशवकी पूजा करनेपर प्राप्त हो जाता है।

पुरुषोत्तम मासकी 'कमला' और 'कामदा' एकादशीका माहात्म्य

युधिष्ठिरने पूछा—भगवन् ! अब मैं श्रीविष्णुके व्रतोंमें उत्तम व्रतका, जो सब पापोंको हर लेनेवाला तथा व्रती मनुष्योंको मनोवाञ्छित फल देनेवाला हो, श्रवण करना चाहता हूँ। जनार्दन ! पुरुषोत्तम मासकी एकादशीकी कथा कहिये, उसका क्या फल है ? और उसमें किस देवताका पूजन किया जाता है ? प्रभो ! किस दानका क्या पुण्य है ? मनुष्योंको क्या करना चाहिये ? उस समय कैसे स्नान किया जाता है ? किस मन्त्रका जप होता है ? कैसी पूजन-विधि बतायी गयी है ? पुरुषोत्तम ! पुरुषोत्तम मासमें किस अन्नका भोजन उत्तम है ?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजेन्द्र ! अधिक मास आनेपर जो एकादशी होती है, वह 'कमला' नामसे प्रसिद्ध है। वह तिथियोंमें उत्तम तिथि है। उसके व्रतके प्रभावसे लक्ष्मी अनुकूल होती हैं। उस दिन ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर भगवान् पुरुषोत्तमका स्मरण करे और विधिपूर्वक स्नान करके व्रती पुरुष व्रतका नियम ग्रहण करे। घरपर जप करनेका एक गुना, नदीके तटपर दूना, गोशालामें सहस्रगुना, अग्निहोत्रगृहमें एक हजार एक सौ गुना, शिवके क्षेत्रोंमें, तीर्थोंमें, देवताओंके निकट तथा तुलसीके समीप लाख गुना और भगवान् विष्णुके निकट अनन्त गुना फल होता है।

अवन्तीपुरीमें शिवशर्मा नामक एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते थे, उनके पाँच पुत्र थे। इनमें जो सबसे छोटा था, वह पापाचारी हो गया; इसलिये पिता तथा स्वजनोंने उसे त्याग दिया। अपने बुरे कर्मोंके कारण निर्वासित होकर वह बहुत दूर वनमें चला गया। दैवयोगसे एक दिन वह तीर्थराज प्रयागमें जा पहुँचा। भूखसे दुर्बल शरीर और दीन मुख लिये उसने त्रिवेणीमें स्नान किया। फिर क्षुधासे पीड़ित होकर वह वहाँ मुनियोंके आश्रम खोजने लगा। इतनेमें उसे वहाँ हरिमित्र मुनिका उत्तम आश्रम दिखायी दिया। पुरुषोत्तम मासमें वहाँ बहुत-से मनुष्य एकत्रित हुए थे। आश्रमपर पापनाशक कथा कहनेवाले ब्राह्मणोंके मुखसे उसने श्रद्धापूर्वक 'कमला' एकादशीकी महिमा सुनी, जो परम पुण्यमयी तथा भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाली है। जयशर्माने विधिपूर्वक 'कमला' एकादशीकी कथा सुनकर उन सबके साथ मुनिके आश्रमपर ही व्रत किया। जब आधी रात हुई तो भगवती लक्ष्मी उसके पास आकर बोलीं—'ब्रह्मन् ! इस समय 'कमला' एकादशीके व्रतके प्रभावसे मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ और देवाधिदेव श्रीहरिकी आज्ञा पाकर वैकुण्ठधामसे आयी हूँ। मैं तुम्हें वर दूँगी।'

ब्राह्मण बोला—माता लक्ष्मी ! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो वह व्रत बताइये, जिसकी कथा-वार्तामें साधु-ब्राह्मण सदा संलग्न रहते हैं।

* तुलसीदलपुष्पाणि ये यच्छन्ति जनार्दने। कार्तिके सकलं वत्स पापं जन्मार्जितं दहेत्॥
दृष्टा स्पृष्टाथ वा ध्याता कीर्तिता नामतः स्तुता। रोपिता सेचिता नित्यं पूजिता तुलसी नता॥
नवधा तुलसीभक्तिं ये कुर्वन्ति दिने दिने। युगकोटिसहस्राणि तन्वन्ति सुकृतं मुने॥ (६३। ६१-६३)

लक्ष्मीने कहा—ब्राह्मण ! एकादशी-व्रतका माहात्म्य श्रोताओंके सुनने योग्य सर्वोत्तम विषय है । यह पवित्र वस्तुओंमें सबसे उत्तम है । इससे दुःस्वप्नका नाश तथा पुण्यकी प्राप्ति होती है, अतः इसका यत्नपूर्वक श्रवण करना चाहिये । उत्तम पुरुष श्रद्धासे युक्त हो एक या आधे श्लोकका पाठ करनेसे भी करोड़ों महापातकोंसे तत्काल मुक्त हो जाता है । जैसे मासोंमें पुरुषोत्तम मास, पक्षियोंमें गरुड़ तथा नदियोंमें गङ्गा श्रेष्ठ हैं; उसी प्रकार तिथियोंमें द्वादशी तिथि उत्तम है । समस्त देवता आज भी [एकादशी व्रतके ही लोभसे] भारतवर्षमें जन्म लेनेकी इच्छा रखते हैं । देवगण सदा ही रोग-शोकसे रहित भगवान् नारायणका पूजन करते हैं । जो लोग मेरे प्रभु भगवान् नारायणके नामका सदा भक्तिपूर्वक जप करते हैं, उनकी ब्रह्मा आदि देवता सर्वदा पूजा करते हैं । जो लोग श्रीहरिके नाम-जपमें संलग्न हैं, उनकी लीला-कथाओंके कीर्तनमें तत्पर हैं तथा निरन्तर श्रीहरिकी पूजामें ही प्रवृत्त रहते हैं; वे मनुष्य कलियुगमें कृतार्थ हैं । यदि दिनमें एकादशी और द्वादशी हो तथा रात्रि बीतते-बीतते त्रयोदशी आ जाय तो उस त्रयोदशीके पारणमें सौ यज्ञोंका फल प्राप्त होता है । व्रत करनेवाला पुरुष चक्र-सुदर्शनधारी देवाधिदेव श्रीविष्णुके समक्ष निम्नाङ्कित मन्त्रका

उच्चारण करके भक्तिभावसे संतुष्टचित्त होकर उपवास करे । वह मन्त्र इस प्रकार है—

एकादश्यां निराहारः स्थित्वाहमपरेऽहनि ।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥
(६४ । ३४)

'कमलनयन भगवान् अच्युत ! मैं एकादशीको निराहार रहकर दूसरे दिन भोजन करूँगा । आप मुझे शरण दें ।'

तत्पश्चात् व्रत करनेवाला मनुष्य मन और इन्द्रियोंको वशमें करके गीत, वाद्य, नृत्य और पुराण-पाठ आदिके द्वारा रात्रिमें भगवान्‌के समक्ष जागरण करे । फिर द्वादशीके दिन उठकर स्नानके पश्चात् जितेन्द्रियभावसे विधिपूर्वक श्रीविष्णुकी पूजा करे । एकादशीको पञ्चामृतसे जनार्दनको नहलाकर द्वादशीको केवल दूधमें स्नान करानेसे श्रीहरिका सायुज्य प्राप्त होता है । पूजा करके भगवान्‌से इस प्रकार प्रार्थना करे—

अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव ।
प्रसीद सुमुखो भूत्वा ज्ञानदृष्टिप्रदो भव ॥
(६४ । ३९)

'केशव ! मैं अज्ञानरूपी रतौंधीसे अंधा हो गया हूँ । आप इस व्रतसे प्रसन्न हों और प्रसन्न होकर मुझे ज्ञानदृष्टि प्रदान करें ।'

इस प्रकार देवताओंके स्वामी देवाधिदेव भगवान् गदाधरसे निवेदन करके भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराये तथा उन्हें दक्षिणा दे । उसके बाद भगवान् नारायणके शरणागत होकर बलिवैश्वदेवकी विधिसे पञ्चमहायज्ञोंका अनुष्ठान करके स्वयं मौन हो अपने बन्धु-बान्धवोंके साथ भोजन करे । इस प्रकार जो शुद्ध भावसे पुण्यमय एकादशीका व्रत करता है, वह पुनरावृत्तिसे रहित वैकुण्ठधामको प्राप्त होता है ।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—राजन् ! ऐसा कहकर लक्ष्मीदेवी उस ब्राह्मणको वरदान दे अन्तर्धान हो गयीं । फिर वह ब्राह्मण भी धनी होकर पिताके घरपर आ गया । इस प्रकार जो 'कमला' का उत्तम व्रत करता है तथा एकादशीके दिन इसका माहात्म्य सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है ।

युधिष्ठिर बोले—जनार्दन ! पापका नाश और पुण्यका दान करनेवाली एकादशीके माहात्म्यका पुनः वर्णन कीजिये, जिसे इस लोकमें करके मनुष्य परम पदको प्राप्त होता है ।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—राजन् ! शुक्ल या कृष्ण पक्षमें जभी एकादशी प्राप्त हो, उसका परित्याग न करे, क्योंकि वह मोक्षरूप सुखको बढ़ानेवाली है। कलियुगमें तो एकादशी ही भव-बन्धनसे मुक्त करनेवाली, सम्पूर्ण मनोवाञ्छित कामनाओंको देनेवाली तथा पापोंका नाश करनेवाली है। एकादशी रविवारको, किसी मंगलमय पर्वके समय अथवा संक्रान्तिके ही दिन क्यों न हो, सदा ही उसका व्रत करना चाहिये। भगवान् विष्णुके प्रिय भक्तोंको एकादशीका त्याग कभी नहीं करना चाहिये। जो शास्त्रोक्त विधिसे इस लोकमें एकादशीका व्रत करते हैं, वे जीवन्मुक्त देखे जाते हैं, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

युधिष्ठिरने पूछा—श्रीकृष्ण ! वे जीवन्मुक्त कैसे हैं ? तथा विष्णुरूप कैसे होते हैं ? मुझे इस विषयको जाननेके लिये बड़ी उत्सुकता हो रही है।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन् ! जो कलियुगमें भक्तिपूर्वक शास्त्रीय विधिके अनुसार निर्जल रहकर एकादशीका उत्तम व्रत करते हैं, वे विष्णुरूप तथा जीवन्मुक्त क्यों नहीं हो सकते हैं ? एकादशी व्रतके समान सब पापोंको हरनेवाला तथा मनुष्योंकी समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाला पवित्र व्रत दूसरा कोई नहीं है। दशमीको एक बार भोजन, एकादशीको निर्जल व्रत तथा द्वादशीको पारण करके मनुष्य श्रीविष्णुके समान हो जाते हैं। पुरुषोत्तम मासके द्वितीय पक्षकी एकादशीका नाम 'कामदा' है। जो श्रद्धापूर्वक 'कामदा'के शुभ व्रतका अनुष्ठान करता है, वह इस लोक और परलोकमें भी मनोवाञ्छित वस्तुको पाता है। यह 'कामदा' पवित्र, पावन, महापातकनाशिनी तथा व्रत करनेवालोंको भोग एवं मोक्ष प्रदान करनेवाली है। नृपश्रेष्ठ ! 'कामदा' एकादशीको विधिपूर्वक पुष्प, धूप, नैवेद्य तथा फल आदिके द्वारा भगवान् पुरुषोत्तमकी पूजा करनी चाहिये। व्रत करनेवाला वैष्णव पुरुष दशमी तिथिको काँसके बर्तन, उड़द, मसूर, चना, कोदो, साग, मधु, पराया अन्न, दो बार भोजन तथा मैथुन—इन दसोंका परित्याग करे। इसी प्रकार एकादशीको जूआ, निद्रा, पान, दाँतुन, परायी निन्दा, चुगली, चोरी, हिंसा, मैथुन, क्रोध और असत्य-भाषण—इन ग्यारह दोषोंको त्याग दे तथा द्वादशीके दिन काँसका बर्तन, उड़द, मसूर, तेल, असत्य-भाषण, व्यायाम, परदेशगमन, दो बार भोजन, मैथुन, बैलकी पीठपर सवारी, पराया अन्न तथा साग—इन बारह वस्तुओंका त्याग करे। राजन् ! जिन्होंने इस विधिसे 'कामदा' एकादशीका व्रत किया और रात्रिमें जागरण करके श्रीपुरुषोत्तमकी पूजा की है, वे सब पापोंसे मुक्त हो परम गतिको प्राप्त होते हैं। इसके पढ़ने और सुननेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है।

चातुर्मास्य व्रतकी विधि और उद्यापन

नारदजीने पूछा—महेश्वर ! पृथ्वीपर चातुर्मास्य व्रतके जो प्रसिद्ध नियम हैं, उन्हें मैं सुनना चाहता हूँ; आप उनका वर्णन कीजिये।

महादेवजी बोले—देवर्षे ! सुनो, मैं तुम्हारे प्रश्नका उत्तर देता हूँ। आषाढ़के शुक्लपक्षमें एकादशीको उपवास करके भक्तिपूर्वक चातुर्मास्य व्रतके नियम ग्रहण करे। श्रीहरिके योगनिद्रामें प्रवृत्त हो जानेपर मनुष्य चार मास अर्थात् कार्तिककी पूर्णिमातक भूमिपर शयन करे। इस बीचमें न तो घर या मन्दिर आदिकी प्रतिष्ठा होती है और न यज्ञादि कार्य ही सम्पन्न होते हैं। विवाह, यज्ञोपवीत, अन्यान्य माङ्गलिक कर्म, राजाओंकी यात्रा तथा नाना प्रकारकी दूसरी-दूसरी क्रियाएँ भी नहीं होतीं। मनुष्य एक हजार अश्वमेध यज्ञ करनेसे जिस फलको पाता है, वही चातुर्मास्य व्रतके अनुष्ठानसे प्राप्त कर लेता है। जब सूर्य मिथुन राशिपर हों, तब भगवान् मधुसूदनको शयन कराये और तुला राशिके सूर्य होनेपर पुनः श्रीहरिको शयनसे उठाये। यदि मलमास आ जाय तो निम्नलिखित विधिका अनुष्ठान करे। भगवान् विष्णुकी प्रतिमा स्थापित करे, जो शङ्ख, चक्र और गदा धारण करनेवाली हो, जिसे पीताम्बर पहनाया गया हो तथा जो सौम्य आकारवाली हो। नारद ! उसे शुद्ध एवं सुन्दर पलंगपर, जिसके ऊपर सफेद चादर बिछी हो और तकिया रखी हो, स्थापित करे। फिर दही, दूध, मधु, लावा और घीसे नहलाकर उत्तम चन्दनका लेप करे। तत्पश्चात् धूप दिखाकर मनोहर पुष्पोंसे शृङ्गार करे। इस प्रकार उसकी पूजा करके निम्नाङ्कित मन्त्रसे प्रार्थना करे—

सुप्ते त्वयि जगन्नाथ जगत्सुप्तं भवेदिदम् ।
विबुद्धे त्वयि बुध्येत जगत्सर्वं चराचरम् ॥
(६६ । १५)

'जगन्नाथ ! आपके सो जानेपर यह सारा जगत् सो जाता है तथा आपके जाग्रत् होनेपर सम्पूर्ण चराचर जगत् जाग उठता है ।'

नारद ! इस प्रकार भगवान् विष्णुकी प्रतिमाको स्थापित करके उसीके आगे स्वयं वाणीसे कहकर चातुर्मास्य व्रतके नियम ग्रहण करे । स्त्री हो या पुरुष, जो भगवान्‌का भक्त हो, उसे हरिबोधिनी एकादशीतक चार महीनोंके लिये नियम अवश्य ग्रहण करने चाहिये । जितात्मा पुरुष निर्मल प्रभातकालमें दन्तधावनपूर्वक उपवास करके नित्यकर्मका अनुष्ठान करनेके पश्चात् भगवान् विष्णुके समक्ष जिन नियमोंको ग्रहण करता है, उनका तथा उनके पालन करनेवालोंका फल पृथक्-पृथक् बतलाता हूँ ।

विद्वन् ! चातुर्मास्यमें गुडका त्याग करनेसे मनुष्यको मधुरताकी प्राप्ति होती है । इसी प्रकार तेलको त्याग देनेसे दीर्घायु संतान और सुगन्धित तेलके त्यागसे अनुपम सौभाग्यकी प्राप्ति होती है । योगाभ्यासी मनुष्य ब्रह्मपदको प्राप्त होता है । ताम्बूलका त्याग करनेसे मनुष्य भोग-सामग्रीसे सम्पन्न होता और उसका कण्ठ सुरीला होता है । घीके त्यागसे लावण्यकी प्राप्ति होती और शरीर चिकना होता है । विप्रवर ! फलका त्याग करनेवालेको बहुत-से पुत्रोंकी प्राप्ति होती है । जो चौमासे भर पलाशके पत्तेमें भोजन करता है, वह रूपवान् और भोग-सामग्रीसे सम्पन्न होता है । दही-दूध छोड़नेवाले मनुष्यको गोलोक मिलता है । जो मौनव्रत धारण करता है, उसकी आज्ञा भंग नहीं होती । जो स्थालीपाक (बटलोईमें भोजन बनाकर खाने) का त्याग करता है, वह इन्द्रका सिंहासन प्राप्त करता है । नारद ! इस प्रकारके त्यागसे धर्मकी सिद्धि होती है । इसके साथ 'नमो नारायणाय' का जप करनेसे सौगुने फलकी प्राप्ति होती है । चौमासेका व्रत करनेवाला पुरुष पोखरेमें स्नान करनेमात्रसे गङ्गा-स्नानका फल पाता है । जो सदा पृथ्वीपर भोजन करता है, वह पृथ्वीका स्वामी होता है । श्रीविष्णुकी चरण-वन्दना करनेसे गोदानका फल मिलता है । उनके चरण-कमलोंका स्पर्श करनेसे मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है । प्रतिदिन एक समय भोजन करनेवाला पुरुष अग्निष्टोम यज्ञका फलभागी होता है । जो श्रीविष्णुकी एक सौ आठ बार परिक्रमा करता है, वह दिव्य विमानपर बैठकर यात्रा करता है । विद्वन् ! पञ्चगव्य खानेवाले मनुष्यको चान्द्रायणका फल मिलता है । जो प्रतिदिन भगवान् विष्णुके आगे शास्त्रविनोदके द्वारा लोगोंको ज्ञान देता है, वह व्यासस्वरूप विद्वान् श्रीविष्णु-धामको प्राप्त होता है । तुलसीदलसे भगवान्‌की पूजा करके मानव वैकुण्ठधाममें जाता है । गर्म जलका त्याग कर देनेसे पुष्कर तीर्थमें स्नान करनेका फल होता है । जो पत्तोंमें भोजन करता है, उसे कुरुक्षेत्रका फल मिलता है । जो प्रतिदिन पत्थरकी शिलापर भोजन करता है, उसे प्रयाग तीर्थका पुण्य प्राप्त होता है ।

चौमासेमें काँसीके बरतनोंका त्याग करके अन्यान्य धातुओंके पात्रोंका उपयोग करे । अन्य किसी प्रकारका पात्र न मिलनेपर मिट्टीका ही पात्र उत्तम है । अथवा स्वयं ही पलाशके पत्ते लाकर उनकी पत्तल बनावे और उनसे भोजन-पात्रका काम ले । जो पूरे एक वर्षतक प्रतिदिन अग्निहोत्र करता है और जो वनमें रहकर केवल पत्तोंमें भोजन करता है, उन दोनोंको समान फल मिलता है । पलाशके पत्तोंमें किया हुआ भोजन चान्द्रायणके समान माना गया है । पलाशके पत्तोंमें एक-एक बारका भोजन त्रिरात्र व्रतके समान पुण्यदायक और बड़े-बड़े पातकोंका नाश करनेवाला बताया गया है । एकादशीके व्रतका जो पुण्य है, वही पलाशके पत्तेमें भोजन करनेका भी बतलाया गया है । उससे मनुष्य सब प्रकारके दानों तथा समस्त तीर्थोंका फल पा लेता है । कमलके पत्तोंमें भोजन करनेसे कभी नरक नहीं देखना पड़ता । ब्राह्मण उसमें भोजन करनेसे वैकुण्ठमें जाता है । ब्रह्माजीका महान् वृक्ष—पलाश पापोंका नाशक और सम्पूर्ण कामनाओंका दाता है । नारद ! इसका बिचला पत्ता शूद्र जातिके लिये निषिद्ध है । यदि शूद्र पलाशके बिचले पत्रमें भोजन करता है तो उसे चौदह इन्द्रोंकी आयुपर्यन्त नरकमें रहना पड़ता है; अतः वह बिचले पत्रको त्याग दे और शेष पत्रोंमें भोजन किया करे । ब्रह्मन् ! जो शूद्र बिचले पत्रमें भोजन करता है, वह ब्राह्मणको कपिला गौ दान करनेसे ही शुद्ध होता है, अन्यथा नहीं ।

यदि शूद्र अपने घरमें कपिला गौका दोहन करे तो वह दस हजार वर्षोंतक विष्ठाका कीड़ा होता है । कीड़ेकी योनिसे छूटनेपर पशुयोनिमें जन्म लेता है । जो शूद्र कपिल जातिके बैलको गाड़ीमें जोतकर हाँकता है, वह उस बैलके शरीरमें जितने रोएँ

होते हैं, उतने वर्षोंतक कुम्भीपाकमें पकाया जाता है; यदि शूद्र पानी लानेके लिये किसी ब्राह्मणको घरमें भेजे तो वह जल मदिराके तुल्य होता है और उसे पीनेवाला नरकमें जाता है। जो शूद्र बुलानेपर ब्राह्मणोंके घर भोजन करता है, उसके लिये वह अन्न अमृतके समान होता है और उसे खाकर वह मोक्ष प्राप्त करता है। जो शूद्र लोभवश दूसरेका, विशेषतः ब्राह्मणोंका सोना या चाँदी ले लेता है, वह नरकमें जाता है। शूद्रको चाहिये कि वह सदा ब्राह्मणोंको दान दे और उनमें विशेषरूपसे भक्तिभाव करे। विशेषतः चौमासेमें जैसे भगवान् विष्णु आराधनीय हैं, वैसे ही ब्राह्मण भी। नारद! ब्राह्मणोंकी विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। भाद्रपद मास आनेपर उनकी महापूजा होती है। चौमासेमें भूमिपर शयन करनेवाला मनुष्य विमान प्राप्त करता है। दस हजार वर्षोंतक उसे रोग नहीं सताते। वह मनुष्य बहुत-से पुत्र और धनसे युक्त होता है। उसे कभी कोढ़की बीमारी नहीं होती। बिना माँगे स्वतः प्राप्त हुए अन्नका भोजन करनेसे बावली और कुआँ बनवानेका फल होता है। जो प्राणियोंकी हिंसासे मुँह मोड़कर द्रोहका त्याग कर देता है, वह भी पूर्वोक्त पुण्यका भागी होता है। वेदोंमें बताया गया है कि 'अहिंसा श्रेष्ठ धर्म है।' दान, दया और दम—ये भी उत्तम धर्म हैं, यह बात मैंने सर्वत्र ही सुनी है; अतः बड़े लोगोंको भी चाहिये कि वे पूरा प्रयत्न करके उक्त धर्मोंका पालन करें। यह चातुर्मास्य व्रत मनुष्योंद्वारा सदा पालन करने योग्य है। ब्रह्मन्! और अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता? इस पृथ्वीपर जो लोग भगवान् विष्णुके भक्त हैं, वे धन्य हैं! उनका कुल अत्यन्त धन्य है! तथा उनकी जाति भी परम धन्य मानी गयी है।

जो भगवान् जनार्दनके शयन करनेपर मधु भक्षण करता है, उसे महान् पाप लगता है; अब उसके त्यागनेका जो पुण्य है, उसका भी श्रवण करो; नाना प्रकारके जितने भी यज्ञ हैं, उन सबके अनुष्ठानका फल उसे प्राप्त होता है। चौमासेमें अनार, नीबू और नारियलका भी त्याग करे। ऐसा करनेवाला पुरुष विमानपर विचरनेवाला देवता होकर अन्तमें भगवान् विष्णुके वैकुण्ठधामको प्राप्त होता है। जो मनुष्य धान, जौ और गेहूँका त्याग करता है, वह विधिपूर्वक दक्षिणासहित अश्वमेधादि यज्ञोंके अनुष्ठानका फल पाता है। साथ ही वह धन-धान्यसे सम्पन्न और अनेक पुत्रोंसे युक्त होता है। तुलसीदल, तिल और कुशोंसे तर्पण करनेका फल कोटिगुना बताया गया है। विशेषतः चातुर्मास्यमें उसका फल बहुत अधिक होता है। जो भगवान् विष्णुके सामने वेदके एक या आधे पदका अथवा एक या आधी ऋचाका भी गान करते हैं, वे निश्चय ही भगवान्‌के भक्त हैं; इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। नारद! जो चौमासेमें दही, दूध, पत्र, गुड़ और साग छोड़ देता है, वह निश्चय ही मोक्षका भागी होता है। मुने! जो मनुष्य प्रतिदिन आँवला मिले हुए जलसे ही स्नान करते हैं, उन्हें नित्य महान् पुण्य प्राप्त होता है। मनीषी पुरुष आँवलेके फलको पापहारी बतलाते हैं। ब्रह्माजीने तीनों लोकोंको तारनेके लिये पूर्वकालमें आँवलेकी सृष्टि की थी। जो मनुष्य चौमासेभर अपने हाथसे भोजन बनाकर खाता है, वह दस हजार वर्षोंतक इन्द्रलोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो मौन होकर भोजन करता है, वह कभी दुःखमें नहीं पड़ता। मौन होकर भोजन करनेवाले राक्षस भी स्वर्गलोकमें चले गये हैं। यदि पके हुए अन्नमें कीड़े-मकोड़े पड़ जायँ तो वह अशुद्ध हो जाता है। यदि मानव उस अपवित्र अन्नको खा ले तो वह दोषका भागी होता है।

मौन होकर भोजन करनेवाला पुरुष निस्सन्देह स्वर्गलोकमें जाता है। जो बात करते हुए भोजन करता है, उसके वार्तालापसे अन्न अशुद्ध हो जाता है, वह केवल पापका भोजन करता है; अतः मौन-धारण अवश्य करना चाहिये। नारद! मौनावलम्बनपूर्वक जो भोजन किया जाता है, उसे उपवासके समान जानना चाहिये। जो नरश्रेष्ठ प्रतिदिन प्राणवायुको पाँच आहुतियाँ देकर मौन भोजन करता है, उसके पाँच पातक निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। ब्रह्मन्! पितृकर्म (श्राद्ध) में सिला हुआ वस्त्र नहीं पहनना चाहिये। अपवित्र अङ्गपर पड़ा हुआ वस्त्र भी अशुद्ध हो जाता है। मल-मूत्रका त्याग अथवा मैथुन करते समय कमर अथवा पीठपर जो वस्त्र रहता है, उस वस्त्रको अवश्य ही बदल दे। श्राद्धमें तो ऐसे वस्त्रको त्याग देना ही उचित है। मुने! विद्वान् पुरुषोंको सदा चक्रधारी भगवान् विष्णुकी पूजा करनी चाहिये। विशेषतः पवित्र एवं जितेन्द्रिय पुरुषोंका यह आवश्यक कर्तव्य है। भगवान् हृषीकेशके शयन करनेपर तृणशाक (पत्तियोंका साग), कुसुम्भिका (लौकी) तथा सिले हुए कपड़े यत्नपूर्वक त्याग देने चाहिये। जो चौमासेमें भगवान्‌के शयन करनेपर इन वस्तुओंको त्याग देता है, वह कल्पपर्यन्त कभी नरकमें नहीं पड़ता। विप्रवर! जिसने असत्य-भाषण, क्रोध, शहद तथा पर्वके अवसरपर मैथुनका त्याग कर दिया है, वह

अश्वमेध यज्ञका फल पाता है। विद्वन्! किसी पदार्थको उपभोगमें लानेके पहले उसमेंसे कुछ ब्राह्मणको दान करना चाहिये; जो ब्राह्मणको दिया जाता है, वह धन अक्षय होता है। ब्रह्मन्! मनुष्य दानमें दिये हुए धनका कोटि-कोटि गुना फल पाता है। जो पुरुष सदा ब्राह्मणकी बतायी हुई उत्तम विधि तथा शास्त्रोक्त नियमोंका पालन करता है, वह परम-पदको प्राप्त होता है; अतः पूर्ण प्रयत्न करके यथाशक्ति नियम और दानके द्वारा देवाधिदेव जनार्दनको संतुष्ट करना चाहिये।

नारदजीने पूछा—विश्वेश्वर! जिसके आचरणसे भगवान् गोविन्द मनुष्योंपर संतुष्ट होते हैं, वह ब्रह्मचर्य कैसा होता है? प्रभो! यह बतलानेकी कृपा करें।

महादेवजीने कहा—विद्वन्! जो केवल अपनी ही स्त्रीसे अनुराग रखता है, उसे विद्वानोंने ब्रह्मचारी माना है। केवल ऋतुकालमें स्त्रीसमागम करनेसे ब्रह्मचर्यकी रक्षा होती है। जो अपनेमें भक्ति रखनेवाली निर्दोष पत्नीका परित्याग करता है, वह पापी मनुष्य लोकमें भ्रूणहत्याको प्राप्त होता है।

चौमासेमें जो स्नान, दान, जप, होम, स्वाध्याय और देवपूजन किया जाता है, वह सब अक्षय होता है। जो एक अथवा दोनों समय पुराण सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके धामको जाता है। जो भगवान्‌के शयन करनेपर विशेषतः उनके नामका कीर्तन और जप करता है, उसे कोटिगुना फल मिलता है। जो ब्राह्मण भगवान् विष्णुका भक्त है और प्रतिदिन उनका पूजन करता है, वही सबमें धर्मात्मा तथा वही सबसे पूज्य है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। मुने! इस पुण्यमय पवित्र एवं पापनाशक चातुर्मास्य व्रतको सुननेसे मनुष्यको गङ्गास्नानका फल मिलता है।

नारदजीने कहा—प्रभो! चातुर्मास्य व्रतका उद्यापन बतलाइये; क्योंकि उद्यापन करनेपर निश्चय ही सब कुछ परिपूर्ण होता है।

महादेवजी बोले—महाभाग! यदि व्रत करनेवाला पुरुष व्रत करनेके पश्चात् उसका उद्यापन नहीं करता, तो वह कर्मोंके यथावत् फलका भागी नहीं होता। मुनिश्रेष्ठ! उस समय विशेषरूपसे सुवर्णके साथ अन्नका दान करना चाहिये; क्योंकि अन्नके दानसे वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो मनुष्य चौमासेभर पलाशकी पत्तलमें भोजन करता है, वह उद्यापनके समय घीके साथ भोजनका पदार्थ ब्राह्मणको दान करे। यदि उसने अयाचित व्रत (बिना माँगे स्वतः प्राप्त अन्नका भोजन) किया हो तो सुवर्णयुक्त वृषभका दान करे। मुनिश्रेष्ठ! उड़दका त्याग करनेवाला पुरुष बछड़े-सहित गौका दान करे। आँवलेके फलसे स्नानका नियम पालन करनेपर मनुष्य एक माशा सुवर्ण दान करे। फलोंके त्यागका नियम करनेपर फल दान करे। धान्यके त्यागका नियम होनेपर कोई-सा धान्य (अन्न) अथवा अगहनीके चावलका दान करे। भूमिशयनका नियम पालन करनेपर रूईके गद्दे और तकिये-सहित शय्यादान करे। द्विजवर! जिसने चौमासेमें ब्रह्मचर्यका पालन किया है, उसको चाहिये कि भक्तिपूर्वक ब्राह्मण-दम्पतिको भोजन दे, साथ ही उपभोगके अन्यान्य सामान, दक्षिणा, साग और नमक दान करे। प्रतिदिन बिना तेल लगाये स्नानका नियम पालन करनेवाला मनुष्य घी और सत्तू दान करे। नख और केश रखनेका नियम पालन करनेपर दर्पण दान करे। यदि जूते छोड़ दिये हों तो उद्यापनके समय जूतोंका दान करना चाहिये। जो प्रतिदिन दीपदान करता रहा हो, वह उस दिन सोनेका दीप प्रस्तुत करे और उसमें घी डालकर विष्णुभक्त ब्राह्मणको दे दे। देते समय यही उद्देश्य होना चाहिये कि मेरा व्रत पूर्ण हो जाय। पान न खानेका नियम लेनेपर सुवर्णसहित कपूरका दान करे। द्विजश्रेष्ठ! इस प्रकार नियमके द्वारा समय-समयपर जो कुछ परित्याग किया हो, वह परलोकमें सुख-प्राप्तिकी इच्छासे विशेषरूपसे दान करे। पहले स्नान आदि करके भगवान् विष्णुके समक्ष उद्यापन कराना चाहिये। शङ्ख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान् विष्णु आदि-अन्तसे रहित हैं, उनके आगे उद्यापन करनेसे व्रत परिपूर्ण होता है।

यमराजकी आराधना और गोपीचन्दनका माहात्म्य

नारदजीने कहा—सुरश्रेष्ठ! अब मेरे हितके लिये आप यमकी आराधना बताइये। देव! किस उपायसे मनुष्यको एक नरकसे दूसरे नरकमें नहीं जाना पड़ता। सुना जाता है—यमलोकमें वैतरणी नदी है, जो दुर्धर्ष, अपार, दुस्तर

तथा रक्तकी धारा बहानेवाली है । वह समस्त प्राणियोंके लिये दुस्तर है, उसे सुगमताके साथ किस प्रकार पार किया जा सकता है ?

महादेवजी बोले—ब्रह्मन् ! पूर्वकालकी बात है, द्वारकापुरीके समुद्रमें स्नान करके मैं ज्यों ही निकला, सामनेसे मुझे ब्रह्मचारी मुद्गल मुनि आते दिखायी दिये । उन्होंने प्रणाम किया और विस्मित होकर इस प्रकार कहना आरम्भ किया ।

मुद्गल बोले—देव ! मैं अकस्मात् मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा था । उस समय मेरे सारे अङ्ग जल रहे थे । इतनेहीमें यमराजके दूतोंने आकर मुझे बलपूर्वक शरीर-से खींचा । मैं अंगूठेके बराबर पुरुष-शरीर धारण करके बाहर निकला; फिर उन दूतोंने मुझे खूब कसकर बाँधा और उसी अवस्थामें यमराजके पास पहुँचा दिया । मैं एक ही क्षणमें यमराजकी सभामें पहुँचकर देखता हूँ कि पीले नेत्र और काले मुखवाले यम सामने ही बैठे हैं । वे महाभयङ्कर जान पड़ते थे । भयानक राक्षस और दानव उनके पास बैठे और सामने खड़े थे । अनेक धर्माधिकारी तथा चित्रगुप्त आदि लेखक वहाँ मौजूद थे । मुझे देखकर विश्वके शासक यमने अपने किङ्करोंसे कहा—'अरे ! तुमलोग नामके भ्रममें पड़कर मुनिको कैसे ले आये ? इन्हें छोड़ो और कौण्डिन्य नामक ग्राममें जो भीमकका पुत्र मुद्गल नामक क्षत्रिय है, उसको ले आओ; क्योंकि उसकी आयु समाप्त हो चुकी है ।'

यह सुनकर वे दूत वहाँ गये और पुनः लौट आये । फिर समस्त यमदूत धर्मराजसे बोले—'सूर्यनन्दन ! वहाँ जानेपर भी हमलोगोंने ऐसे किसी प्राणीको नहीं देखा, जिसकी आयु क्षीण हो चुकी हो । न जाने, कैसे हमलोगों-का चित्त भ्रममें पड़ गया ?'

यमराज बोले—जिन लोगोंने 'वैतरणी' नामक द्वादशीका व्रत किया है, वे तुम यमदूतोंके लिये प्रायः अदृश्य हैं । उज्जैन, प्रयाग अथवा यमुनाके तटपर जिनकी मृत्यु हुई है तथा जिन्होंने तिल, हाथी, सुवर्ण और गौ आदिका दान किया है, वे भी तुमलोगोंकी दृष्टिमें नहीं आ सकते ।

दूतोंने पूछा—स्वामिन् ! वह व्रत कैसा है ? आप उसका पूरा-पूरा वर्णन कीजिये । देव ! मनुष्योंको उस समय ऐसा कौन-सा कर्म करना चाहिये जो आपको संतोष देने-वाला हो । जिन्होंने कृष्णपक्षकी एकादशीका व्रत किया है, वे कैसे पापमुक्त हो सकते हैं ?

यमराज बोले—दूतो ! मार्गशीर्ष आदि मासोंमें जो ये कृष्णपक्षकी द्वादशियाँ आती हैं, उन सबमें विधिपूर्वक वैतरणी व्रत करना चाहिये । जबतक वर्ष पूरा न हो जाय, तबतक प्रतिमास व्रतको चालू रखना चाहिये । व्रतके दिन उपवासका नियम ग्रहण करना चाहिये, जो भगवान् विष्णुको संतोष प्रदान करनेवाला है । द्वादशीको श्रद्धा और भक्तिके साथ श्रीगोविन्दकी पूजा करके इस प्रकार कहे—'देव ! स्वप्नमें इन्द्रियोंकी विकलताके कारण यदि भोजन और मैथुनकी क्रिया बन जाय तो आप मुझपर कृपा करके क्षमा कीजिये ।' इस प्रकार नियम करके मिट्टी, गोमय और तिल लेकर मध्याह्नमें तीर्थ (जलाशय) के पास जाय और व्रत-की पूर्तिके लिये निम्नाङ्कित मन्त्रसे विधिपूर्वक स्नान करे—

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ॥
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया पूर्वसञ्चितम् ।
त्वया हतेन पापेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
काश्यां चैव तु संभूतास्तिला वै विष्णुरूपिणः ।
तिलस्नानेन गोविन्दः सर्वपापं व्यपोहति ॥

विष्णुदेहोद्भवे देवि महापापापहारिणि ।
सर्वपापं हर त्वं वै सर्वौषधि नमोऽस्तु ते ॥
(६८ । ३४—३७)

'वसुन्धरे ! तुम्हारे ऊपर अश्व और रथ चला करते हैं तथा वामन अवतारके समय भगवान् विष्णुने भी तुम्हें अपने चरणोंसे नापा था । मृत्तिके ! मैंने पूर्वजन्ममें जो पाप सञ्चित किया है, मेरा वह सारा पाप तुम हर लो । तुम्हारे द्वारा पापका नाश हो जानेपर मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है । तिल काशीमें उत्पन्न हुए हैं तथा वे भगवान् विष्णुके स्वरूप हैं । तिलमिश्रित जलके द्वारा स्नान करनेपर भगवान् गोविन्द सब पापोंका नाश कर देते हैं । देवी सर्वौषधि ! तुम भगवान् विष्णुके देहसे प्रकट हुई तथा महान् पापोंका अपहरण करनेवाली हो । तुम्हें नमस्कार है । तुम मेरे सारे पाप हर लो ।'

इस प्रकार मृत्तिका आदिके द्वारा स्नान करके सिरपर तुलसीदल धारण कर तुलसीका नाम लेते हुए स्नान करे । यह स्नान ऋषियोंद्वारा बताया गया है । इसे विधिपूर्वक करना चाहिये । इस तरह स्नान करनेके पश्चात् जलसे बाहर निकलकर दो शुद्ध वस्त्र धारण करे । फिर देवताओं और पितरोंका तर्पण करके श्रीविष्णुका पूजन करे । उसकी विधि इस प्रकार है । पहले एक कलशकी, जो फूटा-टूटा न हो, स्थापना करे । उसमें पञ्चपल्लव और पञ्चरत्न डाल दे । फिर दिव्य माला पहनाकर उस कलशको गन्धसे सुवासित करे । कलशमें जल भर दे और उसमें द्रव्य डालकर उसके ऊपर ताँबेका पात्र रख दे । इसके बाद उस पात्रमें देवाधिदेव तपोनिधि भगवान् श्रीधरकी स्थापना करके पूर्वोक्त विधिसे पूजा करे । फिर मिट्टी और गोबर आदिसे सुन्दर मण्डल बनावे । सफेद और धुले हुए चावलोंको पानीमें पीसकर उसके द्वारा मण्डलका संस्कार करे । तत्पश्चात् हाथ-पैर आदि अङ्गोंसे युक्त धर्मराजका स्वरूप बनावे और उसके आगे ताँबेकी वैतरणी नदी स्थापित करके उसकी पूजा करे । उसके बाद पृथक् आवाहन आदि करके यमराजकी विधिवत् पूजा करे ।

पहले भगवान् विष्णुसे इस प्रकार प्रार्थना करे—महाभाग केशव ! मैं विश्वरूपी देवेश्वर यमका आवाहन करता हूँ । आप यहाँ पधारें और समीपमें निवास करें । लक्ष्मीकान्त ! हरे ! यह आसनसहित पाद्य आपकी सेवामें समर्पित है । प्रभो ! विश्वका प्राणिसमुदाय आपका स्वरूप है । आपको नमस्कार है । आप प्रतिदिन मुझपर कृपा कीजिये ।' इस प्रकार प्रार्थना करके 'भूतिदाय नमः' इस मन्त्रके द्वारा भगवान् विष्णुके चरणोंका, 'अशोकाय नमः' से घुटनोंका, 'शिवाय नमः'से जाँघोंका, 'विश्वमूर्तये नमः'से कटिभागका, 'कन्दर्पाय नमः'से लिङ्गका, 'आदित्याय नमः'से अण्डकोषका, 'दामोदराय नमः'से उदरका, 'वासुदेवाय नमः'से स्तनोंका, 'श्रीधराय नमः'से मुखका, 'केशवाय नमः'से केशोंका, 'शार्ङ्गधराय नमः'से पीठका, 'वरदाय नमः'से पुनः चरणोंका, 'शङ्खपाणये नमः', 'चक्रपाणये नमः', 'असिपाणये नमः', 'गदापाणये नमः' और 'परशुपाणये नमः'—इन नाममन्त्रोंद्वारा क्रमशः शङ्ख, चक्र, खड्ग, गदा तथा परशुका तथा 'सर्वात्मने नमः' इस मन्त्रके द्वारा मस्तकका ध्यान करे । इसके बाद यों कहे—'मैं समस्त पापोंकी राशिका नाश करनेके लिये मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, श्रीराम, श्रीकृष्ण, बुद्ध तथा कल्किका पूजन करता हूँ; भगवन् ! इन अवतारोंके रूपमें आपको नमस्कार है । बारंबार नमस्कार है ।' इन सभी मन्त्रोंके द्वारा श्रीविष्णुका ध्यान करके उनका पूजन करे ।*

तत्पश्चात् निम्नाङ्कित नाममन्त्रोंके द्वारा भगवान् धर्मराजका पूजन करना चाहिये—

धर्मराज नमस्तेऽस्तु धर्मराज नमोऽस्तु ते ।
दक्षिणाशाय ते तुभ्यं नमो महिषवाहन ॥

---

* आवाहयामि देवेशं यमं वै विश्वरूपिणम् ।
इहाभ्येहि महाभाग सांनिध्यं कुरु केशव ॥
इदं पाद्यं श्रियः कान्त सोपविष्टं हरे प्रभो ।
विश्वौघाय नमो नित्यं कृपां कुरु ममोपरि ॥
भूतिदाय नमः पादौ अशोकाय च जानुनी ।
ऊरू नमः शिवायेति विश्वमूर्ते नमः कटिम् ॥
कन्दर्पाय नमो मेढ्रमादित्याय फलं तथा ।
दामोदराय जठरं वासुदेवाय वै स्तनौ ॥
श्रीधराय मुखं केशान् केशवायेति वै नमः ।
पृष्ठं शार्ङ्गधरायेति चरणौ वरदाय च ॥
स्वनाम्ना शङ्खचक्रासिगदापरशुपाणये ।
सर्वात्मने नमस्तुभ्यं शिर इत्यभिधीयते ॥
मत्स्यं कूर्मं च वाराहं नारसिंहं च वामनम् ।
रामं रामं च कृष्णं च बुद्धं कल्किं नमोऽस्तु ते ॥
सर्वपापौघनाशार्थं पूजयामि नमो नमः ।
एभिश्च सर्वज्ञो मन्त्रैर्विष्णुं ध्यात्वा प्रपूजयेत् ॥
(६८ । ४५-५२)

चित्रगुप्त नमस्तुभ्यं विचित्राय नमो नमः।
नरकार्तिप्रशान्त्यर्थं कामान् यच्छ ममेप्सितान्॥
यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च।
वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च॥
वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः।
नीलाय चैव दध्नाय नित्यं कुर्यान्नमो नमः॥
(६८।५३-५६)

'धर्मराज ! आपको बारंबार नमस्कार है। दक्षिण दिशाके स्वामी ! आपको नमस्कार है। महिषपर चलनेवाले देवता ! आपको नमस्कार है। चित्रगुप्त ! आपको नमस्कार है। नरककी पीड़ा शान्त करनेके लिये विचित्र नामसे प्रसिद्ध आपको नमस्कार है। आप मेरी मनोवाञ्छित कामनाएँ पूर्ण करें। यम, धर्मराज, मृत्यु, अन्तक, वैवस्वत, काल, सर्वभूत-क्षय, वृकोदर, चित्र, चित्रगुप्त, नील और दध्नको नित्य नमस्कार करना चाहिये।'

तदनन्तर वैतरणीकी प्रतिमाको अर्घ्य देते हुए इस प्रकार कहे—'वैतरणी ! तुम्हें पार करना अत्यन्त कठिन है। तुम पापोंका नाश करनेवाली और सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाली हो। महाभागे ! यहाँ आओ और मेरे दिये हुए अर्घ्यको ग्रहण करो। यमद्वारके भयङ्कर मार्गमें वैतरणी नदी विख्यात है। उससे उद्धार पानेके लिये मैं यह अर्घ्य दे रहा हूँ। जो जन्म, मृत्यु और वृद्धावस्थासे परे है, पापी पुरुषोंके लिये जिसको पार करना अत्यन्त कठिन है, जो समस्त प्राणियोंके भयका निवारण करनेवाली है तथा यातनामें पड़े हुए प्राणी भयके मारे जिसमें डूब जाते हैं, उस भयङ्कर वैतरणी नदीको पार करनेके लिये मैंने यह पूजन किया है। वैतरणी देवी ! तुम्हारी जय हो। तुम्हें बारंबार नमस्कार है। जिसमें देवता वास करते हैं, वही वैतरणी नदी है। मैंने भगवान् केशवकी प्रसन्नताके लिये भक्तिपूर्वक उस नदीका पूजन किया है। पापोंका नाश करनेवाली सिन्धुरूपिणी वैतरणी नदीकी पूजा सम्पन्न हुई। मैं उसे पार करने तथा सब पापोंसे छुटकारा पानेके लिये इस वैतरणी-प्रतिमाका दान करता हूँ।'

इसके बाद निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़कर भगवान्से प्रार्थना करे—

कृष्ण कृष्ण जगन्नाथ संसारादुद्धरस्व माम्॥
नामग्रहणमात्रेण सर्वपापं हरस्व मे।
(६८।६४-६५)

'कृष्ण ! कृष्ण ! जगदीश्वर ! आप संसारसे मेरा उद्धार कीजिये। अपने नामोंके कीर्तनमात्रसे मेरा सारा पाप हर लीजिये।'

फिर क्रमशः यज्ञोपवीत आदि समर्पण करे। यज्ञोपवीतका मन्त्र इस प्रकार है—

यज्ञोपवीतं परमं कारितं नवतन्तुभिः॥
प्रतिगृह्णीष्व देवेश प्रीतो यच्छ ममेप्सितम्।
(६८।६५-६६)

'देवेश्वर ! मैंने नौ तन्तुओंसे इस उत्तम यज्ञोपवीतका निर्माण कराया है, आप इसे ग्रहण करें और प्रसन्न होकर मेरा मनोरथ पूर्ण करें।'

ताम्बूल-मन्त्र

इदं दत्तं च ताम्बूलं यथाशक्ति सुशोभनम्॥
प्रतिगृह्णीष्व देवेश मामुद्धर भवार्णवात्।
(६८।६६-६७)

'देवेश ! मैंने यथाशक्ति उत्तम शोभासम्पन्न ताम्बूल दान किया है, इसे स्वीकार करें और भवसागरसे मेरा उद्धार कर दें।'

दीप-आरतीका मन्त्र

पञ्चवर्तिप्रदीपोऽयं देवेशारातिकं तव॥
मोहान्धकारद्युमणे भक्तियुक्तो भवार्तिहन्।
(६८।६७-६८)

'देवेश ! आप मोहरूपी अन्धकार दूर करनेके लिये सूर्यरूप हैं। भव-बन्धनकी पीड़ा हरनेवाले परमात्मन् ! मैं भक्तियुक्त होकर आपकी सेवामें यह पाँच वत्तियोंका दीपक प्रस्तुत करता हूँ। यह आपके लिये आरती है।'

नैवेद्य-मन्त्र

परमान्नं सुपक्वान्नं समस्तरससंयुतम्॥
निवेदितं मया भक्त्या भगवन् प्रतिगृह्यताम्।
(६८।६८-६९)

'भगवन् ! मैंने सब रसोंसे युक्त सुन्दर पकवान, जो परम उत्तम अन्न है, भक्तिपूर्वक सेवामें निवेदन किया है; आप इसे स्वीकार करें।'

जप-समर्पण

द्वादशाक्षरमन्त्रेण यथासंख्यजपेन च॥
प्रीयतां मे श्रियः कान्तः प्रीतो यच्छतु वाञ्छितम्।
(६८।६९-७०)

'द्वादशाक्षर मन्त्रका यथाशक्ति जप करनेसे भगवान् लक्ष्मीकान्त मुझपर प्रसन्न हों और प्रसन्न होकर मुझे मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करें।'

इस प्रकार श्रीहरिका पूजन करनेके बाद निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़कर गौंको प्रणाम करे—

पञ्च गावः समुत्पन्ना मथ्यमाने महोदधौ।
तासां मध्ये तु या नन्दा तस्यै धेन्वै नमो नमः॥
(६८ । ७०-७१)

'समुद्रका मन्थन होते समय पाँच गौएँ उत्पन्न हुई थीं। उनमेंसे जो नन्दा नामकी धेनु है, उसे मेरा बारंबार नमस्कार है।'

तत्पश्चात् विधिपूर्वक गौकी पूजा करके निम्नाङ्कित मन्त्रोंद्वारा एकाग्रचित्त हो अर्घ्य प्रदान करे—

सर्वकामदुहे देवि सर्वार्तिकनिवारिणि।
आरोग्यं संतर्ति दीर्वां देहि नन्दिनि मे सदा॥
पूजिता च वसिष्ठेन विश्वामित्रेण धीमता।
कपिले हर मे पापं यन्मया पूर्वसञ्चितम्॥
गावो मे अग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
नाके मामुपतिष्ठन्तु हेमशृङ्ग्यः पयोमुचः॥
सुरभ्यः सौरभेयाश्च सरितः सागरास्तथा।
सर्वदेवमये देवि सुभद्रे भक्तवत्सले॥
(६८ । ७२-७५)

'समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली तथा सब प्रकारकी पीड़ा हरनेवाली देवी नन्दिनी! मुझे सर्वदा आरोग्य तथा दीर्घायु संतान प्रदान करो। कपिले! महर्षि वसिष्ठ तथा बुद्धिमान् विश्वामित्रजीने भी तुम्हारी पूजा की है। मैंने पूर्वजन्ममें जो पाप सञ्चित किया है, उसे हर लो। गौएँ मेरे आगे रहें, गौएँ ही मेरे पीछे रहें तथा स्वर्गलोकमें भी सुवर्णमय सींगोंसे सुशोभित, सरिताओं और समुद्रोंकी भाँति दूधकी धारा बहानेवाली सुरभी और उनकी संतानें मेरे पास आवें। सर्वदेवमयी देवी नन्दिनी! तुम परम कल्याणमयी और भक्तवत्सला हो। तुम्हें नमस्कार है।'

इस प्रकार विधिवत् पूजा करके गौओंको प्रतिदिन ग्रास समर्पण करे। उसका मन्त्र इस प्रकार है—

सौरभेय्यः सर्वहिताः पवित्राः पापनाशिनीः।
प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः॥
(६८ । ७६-७७)

'सबके हितमें लगी रहनेवाली, पवित्र, पापनाशिनी तथा त्रिभुवनकी माता गौएँ मेरा दिया हुआ ग्रास ग्रहण करें।'

महादेवजी कहते हैं—इस प्रकार धर्मराजके मुखसे सुने हुए वैतरणी-व्रतका मेरे आगे वर्णन करके इच्छानुसार भ्रमण करनेवाले द्विजश्रेष्ठ मुद्गल मुनि चले गये।

द्विजवर! जहाँ गोपीचन्दन रहता है, वह घर तीर्थ-स्वरूप है—यह भगवान् श्रीविष्णुका कथन है। जिस ब्राह्मणके घरमें गोपीचन्दन मौजूद रहता है, वहाँ कभी शोक, मोह तथा अमङ्गल नहीं होते। जिसके घरमें रात-दिन गोपीचन्दन प्रस्तुत रहता है, उसके पूर्वज सुखी होते हैं तथा सदा उसकी संतति बढ़ती है। गोपीतालावसे उत्पन्न होनेवाली मिट्टी परम पवित्र एवं शरीरका शोधन करनेवाली है। देहमें उसका लेप करनेसे सारे रोग नष्ट होते हैं तथा मानसिक चिन्ताएँ भी दूर हो जाती हैं। अतः पुरुषोंद्वारा शरीरमें धारण किया हुआ गोपीचन्दन सम्पूर्ण कामनाओंकी पूर्ति तथा मोक्ष प्रदान करनेवाला है। इसका ध्यान और पूजन करना चाहिये। यह मल-दोषका विनाश करनेवाला है। इसके स्पर्शमात्रसे मनुष्य पवित्र हो जाता है। वह अन्तकालमें मनुष्योंके लिये मुक्तिदाता एवं परम पावन है। द्विजश्रेष्ठ! मैं क्या बताऊँ, गोपीचन्दन मोक्ष प्रदान करनेवाला है। भगवान् विष्णुका प्रिय तुलसीकाष्ठ, उसके मूलकी मिट्टी, गोपीचन्दन तथा हरिचन्दन—इन चारोंको एकमें मिलाकर विद्वान् पुरुष अपने शरीरमें लगावे। जो ऐसा करता है, उसके द्वारा जम्बूद्वीपके समस्त तीर्थोंका सदाके लिये सेवन हो जाता है। जो गोपीचन्दनको घिसकर उसका तिलक लगाता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो श्रीविष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। जिस पुरुषने गोपीचन्दन धारण कर लिया, उसने मानो गयामें जाकर अपने पिताका श्राद्ध-तर्पण आदि सब कुछ कर लिया।

वैष्णवोंके लक्षण और महिमा तथा श्रवणद्वादशी-व्रतकी विधि और माहात्म्य-कथा

महादेवजी कहते हैं—नारद ! सुनो, अब मैं वैष्णवोंके लक्षण बताऊँगा, जिन्हें सुनकर लोग ब्रह्महत्या आदि पातकोंसे मुक्त हो जाते हैं। भक्त भगवान् विष्णुका होकर रहा है, इसलिये वह वैष्णव कहलाता है। समस्त वर्णोंकी अपेक्षा वैष्णवको श्रेष्ठ कहा गया है। जिनका आहार अत्यन्त पवित्र है, उन्हींके वंशमें वैष्णव पुरुष जन्म धारण करता है। ब्रह्मन्! जिनके भीतर क्षमा, दया, तपस्या और सत्यकी स्थिति है, उन वैष्णवोंके दर्शनमात्रसे आगसे रूईकी भाँति सारा पाप नष्ट हो जाता है। जो हिंसासे दूर रहता है, जिसकी मति सदा भगवान् विष्णुमें लगी रहती है, जो अपने कण्ठमें तुलसीकाष्ठकी माला धारण करता है, प्रतिदिन अपने अङ्गोंमें बारह तिलक लगाये रहता है तथा विद्वान् होकर धर्म और अधर्मका ज्ञान रखता है, वह मनुष्य वैष्णव कहलाता है। जो सदा वेद-शास्त्रके अभ्यासमें लगे रहते, प्रतिदिन यज्ञोंका अनुष्ठान करते तथा बारंबार वर्षके चौबीस उत्सव मनाते रहते हैं, उनका कुल परम धन्य है; उन्हींका यश विस्तारको प्राप्त होता है तथा वे ही लोग संसारमें धन्यतम एवं भगवद्भक्त हैं। ब्रह्मन्! जिसके कुलमें एक ही भगवद्भक्त पुरुष उत्पन्न हो जाता है, उसका कुल बारंबार उस पुरुषके द्वारा उद्धारको प्राप्त होता रहता है। वैष्णवोंके दर्शनमात्रसे ब्रह्महत्यारा भी शुद्ध हो जाता है। महामुने ! इस लोकमें जो वैष्णव पुरुष देखे जाते हैं, तत्त्ववेत्ता पुरुषोंको उन्हें विष्णुके समान ही जानना चाहिये। जिसने भगवान् विष्णुकी पूजा की, उसके द्वारा सबका पूजन हो गया। जिसने वैष्णवोंकी पूजा की, उसने महादान कर लिया। जो वैष्णवोंको सदा फल, पत्र, साग, अन्न अथवा वस्त्र दिया करते हैं, वे इस भूमण्डलमें धन्य हैं। ब्रह्मन्! वैष्णवोंके विषयमें अब और क्या कहा जाय। बारंबार अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है; उनका दर्शन और स्पर्श—सब कुछ सुखद है। जैसे भगवान् विष्णु हैं, वैसा ही उनका भक्त वैष्णव पुरुष भी है। इन दोनोंमें कभी अन्तर नहीं रहता। ऐसा जानकर विद्वान् पुरुष सदा वैष्णवोंकी पूजा करे। जो इस पृथ्वीपर एक ही वैष्णव ब्राह्मणको भोजन करा देता है, उसने सहस्रों ब्राह्मणोंको भोजन करा दिया—इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

नारदजीने कहा—सुरश्रेष्ठ ! जो सदा उपवास करनेमें असमर्थ हैं, उनके लिये कोई एक ही द्वादशीका व्रत, जो पुण्यजनक हो, बतलाइये।

महादेवजी बोले—भाद्रपद मासके शुक्लपक्षमें जो श्रवण नक्षत्रसे युक्त द्वादशी होती है, वह सब कुछ देनेवाली, पुण्यमयी तथा उपवास करनेपर महान् फल देनेवाली है। जो नदियोंके संगममें नहाकर उक्त द्वादशीको उपवास करता है, वह अनायास ही बारह द्वादशियोंका फल पा लेता है। बुधवार और श्रवण नक्षत्रसे युक्त जो द्वादशी होती है, उसका महत्त्व बहुत बड़ा है। उस दिन किया हुआ सब कुछ अक्षय हो जाता है। श्रवण-द्वादशीके दिन विद्वान् पुरुष जलपूर्ण कलशकी स्थापना करके उसके ऊपर एक पात्र रखे और उसमें श्रीजनार्दनकी स्थापना करे। तत्पश्चात् उनके आगे घीमें पका हुआ नैवेद्य निवेदन करे; साथ ही अपनी शक्तिके अनुसार जलसे भरे हुए अनेक नये घड़ोंका दान करे। इस प्रकार श्रीगोविन्दकी पूजा करके उनके समीप रात्रिमें जागरण करे। फिर निर्मल प्रभातकाल आनेपर स्नान करके फूल, धूप, नैवेद्य, फल और सुन्दर वस्त्र आदिके द्वारा भगवान् गरुडध्वजकी पूजा करे। तदनन्तर पुष्पाञ्जलि दे और इस मन्त्रको पढ़े—

> नमो नमस्ते गोविन्द बुधश्रवणसंयुत।
> अघौघसंक्षयं कृत्वा सर्वसौख्यप्रदो भव॥
>
> (७० । १०)

'बुधवार और श्रवण नक्षत्रसे युक्त भगवान् गोविन्द ! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। मेरी पापराशिका नाश करके आप मुझे सब प्रकारके सुख प्रदान करें।'

तत्पश्चात् वेद-वेदाङ्गोंके पारगामी, विशेषतः पुराणोंके ज्ञाता विद्वान् ब्राह्मणको विधिपूर्वक पवित्र अन्नका दान करे। इस प्रकार श्रेष्ठ पुरुष किसी नदीके किनारे एकचित्त होकर उक्त विधिसे सब कार्य पूर्ण करे। इस विषयमें जानकार लोग यह प्राचीन इतिहास कहा करते हैं—एक महान् वनमें जो घटना घटित हुई थी, उसका वर्णन करता हूँ; सुनो।

विद्वन् ! दाशेरक नामका जो देश है, उसके पश्चिम भागमें मरु (मारवाड़) प्रदेश है, जो समस्त प्राणियोंके लिये भय उत्पन्न करनेवाला है। वहाँकी भूमि तपी हुई बालूसे भरी रहती है। वहाँ बड़े-बड़े साँप हैं, जो महादुष्ट होते हैं। वह भूमि थोड़ी

छायावाले वृक्षोंसे व्याप्त है। शमी, खैर, पलाश, करील और पीलू—ये ही वहाँके वृक्ष हैं। मजबूत काँटोंसे घिरे हुए वहाँके वृक्ष बड़े भयङ्कर दिखायी देते हैं; तथापि कर्मबन्धनसे बँधे होनेके कारण वहाँ भी सब जीव जीवन धारण करते हैं। विद्वन्! उस देशमें न तो पर्याप्त जल है और न जल धारण करनेवाले बादल ही वहाँ दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसे देशमें कोई बनिया भाग्यवश अपने साथियोंसे बिछुड़कर इधर-उधर भटक रहा था। उसके हृदयमें भ्रम छा गया था। वह भूख, प्यास और परिश्रमसे पीड़ित हो रहा था। कहाँ गाँव है? कहाँ जल है? मैं कहाँ जाऊँगा? यह कुछ भी उसे जान नहीं पड़ता था। इसी समय उसने कुछ प्रेत देखे, जो भूख-प्याससे व्याकुल एवं भयङ्कर दिखायी देते थे। उनमें एक प्रेत ऐसा था, जो दूसरे प्रेतके कंधेपर चढ़कर चलता था तथा और बहुत-से प्रेत उसे चारों ओरसे घेरे हुए थे। प्रेतोंकी भयानक आवाजके साथ वह भयङ्कर प्रेत उधर ही आ रहा

था। वह उस भयानक जंगलमें मनुष्यको आया देख प्रेतके कंधेसे पृथ्वीपर उतर पड़ा और बनियेके पास आकर उसे प्रणाम करके इस प्रकार बोला—'इस घोर प्रदेशमें आपका कैसे प्रवेश हुआ?' यह सुनकर उस बुद्धिमान् बनियेने कहा—'दैवयोगसे तथा पूर्वजन्मके किये हुए कर्मकी प्रेरणासे मैं अपने साथियोंसे बिछुड़ गया हूँ। इस प्रकार मेरा यहाँ प्रवेश सम्भव हुआ है। इस समय मुझे बड़े जोरकी भूख और प्यास सता रही है।'

तब उस प्रेतने उस समय अपने अतिथिको उत्तम अन्न प्रदान किया। उसके खानेमात्रसे बनियेको बड़ी तृप्ति हुई। वह एक ही क्षणमें प्यास और संतापसे रहित हो गया। इसके बाद वहाँ बहुत-से प्रेत आ पहुँचे। प्रधान प्रेतने क्रमशः उन सबको अन्नका भाग दिया। दही, भात और जलसे उन्हें बड़ी प्रसन्नता और तृप्ति हुई। इस प्रकार अतिथि और प्रेतसमुदायको तृप्त करके उसने स्वयं भी बचे हुए अन्नका सुखपूर्वक भोजन किया। उसके भोजन कर लेनेपर वहाँ जो सुन्दर अन्न और जल प्रस्तुत हुआ था, वह सब अदृश्य हो गया। तब बनियेने उस प्रेतराजसे कहा—'भाई! इस वनमें तो मुझे यह बड़े आश्चर्यकी बात प्रतीत हो रही है। तुम्हें यह उत्तम अन्न और जल कहाँसे प्राप्त हुआ? तुमने थोड़े-से ही अन्नसे इन बहुत-से जीवोंको तृप्त कर दिया। इस घोर जंगलमें तुमलोग कैसे निवास करते हो?'

प्रेत बोला—महाभाग! मैंने अपना पूर्वजन्म केवल वाणिज्य-व्यवसायमें आसक्त होकर व्यतीत किया है। समूचे नगरमें मेरे समान दूसरा कोई दुरात्मा नहीं था। धनके लोभसे मैंने कभी किसीको भीखतक नहीं दी। उन दिनों एक गुणवान् ब्राह्मण मेरे मित्र थे। एक समय भादोंके महीनेमें, जब श्रवण नक्षत्र और द्वादशीका योग आया था, वे मुझे साथ लेकर तापी नदीके तटपर गये, जहाँ उसका चन्द्रभागा नदीके साथ पवित्र संगम हुआ था। चन्द्रभागा चन्द्रमाकी पुत्री है और तापी सूर्यकी। उन दोनोंके मिले हुए शीत और उष्ण जलमें मैंने ब्राह्मणके साथ प्रवेश किया। श्रवण-द्वादशीके योगमें बहुत-से मनुष्योंको संतुष्ट किया। चन्द्रभागाके उत्तम जलसे भरकर ब्राह्मणको जलपात्र दान किया तथा दही और भातके साथ जलसे भरे हुए बहुत-से पुरवे भी ब्राह्मणोंको दिये। इसके सिवा भगवान् शङ्करके समक्ष श्रेष्ठ ब्राह्मणको छाता, जूते, वस्त्र तथा श्रीहरिकी प्रतिमा भी दान की। उस नदीके तीरपर मैंने धनकी रक्षाके लिये व्रत किया था। उपवासपूर्वक एक मनोहर जलपात्र भी दान किया था। यह सब करके मैं घर लौट आया। तदनन्तर, कुछ कालके बाद मेरी मृत्यु हो गयी। नास्तिक होनेके कारण मुझे प्रेतकी योनिमें आना पड़ा। श्रवण-द्वादशीके योगमें मैंने जलका बड़ा पात्र दान किया था, इसलिये प्रतिदिन

मध्याह्नके समय यह मुझे प्राप्त होता है। ये सब ब्राह्मणका धन चुरानेवाले पापी हैं, जो प्रेतभावको प्राप्त हुए हैं। इनमें कुछ परस्त्रीलम्पट और कुछ अपने स्वामीसे द्रोह करनेवाले रहे हैं। इस मरुप्रदेशमें आकर ये मेरे मित्र हो गये हैं। सनातन परमात्मा भगवान् विष्णु अक्षय (अविनाशी) हैं। उनके उद्देश्य-से जो कुछ दिया जाता है, वह सब अक्षय कहा गया है। उस अक्षय अन्नसे ही ये प्रेत पुनः-पुनः तृप्त होते रहते हैं। आज तुम मेरे अतिथिके रूपमें उपस्थित हुए हो। मैं अन्नसे तुम्हारी पूजा करके प्रेतभावसे मुक्त हो परमगतिको प्राप्त होऊँगा; परन्तु मेरे बिना ये प्रेत इस भयङ्कर वनमें कर्मानुसार प्राप्त हुई प्रेतयोनिकी दुस्सह पीड़ा भोगेंगे; अतः तुम मुझपर कृपा करनेके लिये इन सबके नाम और गोत्र लिखकर ले लो। महामते! यहाँसे हिमालयपर जाकर तुम खजाना प्राप्त करोगे। तत्पश्चात् गया जाकर इन सबका श्राद्ध कर देना।

महादेवजी कहते हैं—नारद! वनियेको इस प्रकार आदेश देकर प्रेतने उसे सुखपूर्वक विदा किया। घर आनेपर उसने हिमालयकी यात्रा की और वहाँसे प्रेतका बताया हुआ खजाना लेकर वह लौट आया। उस खजानेका छठा अंश साथ लेकर वह 'गया' तीर्थमें गया। वहाँ पहुँचकर उस परम बुद्धिमान् वनियेने शास्त्रोक्त विधिसे उन प्रेतोंका श्राद्ध किया। एक-एकके नाम और गोत्रका उच्चारण करके उनके लिये पिण्डदान किया। वह जिस दिन जिसका श्राद्ध करता था, उस दिन वह आकर स्वप्नमें वनियेको प्रत्यक्ष दर्शन देता और कहता कि 'महाभाग! तुम्हारी कृपासे मैंने प्रेतभावको त्याग दिया और अब मैं परमगतिको प्राप्त हो रहा हूँ।' इस प्रकार वह महामना वैश्य गया-तीर्थमें प्रेतोंका विधिपूर्वक श्राद्ध करके बारंबार भगवान् विष्णुका ध्यान करता हुआ अपने घर लौट आया। फिर भाद्रपद मासके शुक्लपक्षमें, जब श्रवण-द्वादशीका योग आया, तब वह सब आवश्यक सामग्री साथ लेकर नदीके संगमपर गया और वहाँ स्नान करके उसने द्वादशीका व्रत किया। स्नान, दान और भगवान् विष्णुका पूजन करनेके अनन्तर ब्राह्मणको उपहार भेंट किया। एकचित्त होकर उस बुद्धिमान् वैश्यने शास्त्रोक्त विधिसे सब कार्य सम्पन्न किया। उसके बाद प्रतिवर्ष भादोंका महीना आनेपर श्रवण-द्वादशीके योगमें नदीके संगमपर जाकर वह भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे पूर्वोक्त प्रकार-से स्नान-दान आदि सब कार्य करने लगा। तदनन्तर दीर्घ-कालके पश्चात् उसकी मृत्यु हो गयी। उसने सब मनुष्योंके लिये दुर्लभ परमधामको प्राप्त कर लिया। आज भी वह विष्णुदूतोंसे सेवित हो वैकुण्ठधाममें विहार कर रहा है। ब्रह्मन्! तुम भी इसी प्रकार श्रवणद्वादशीका व्रत करो। वह इस लोक और परलोकमें भी सम्पूर्ण सौभाग्य प्रदान करनेवाला, उत्तम बुद्धिका देनेवाला तथा सब पापोंको हरने-वाला उत्तम साधन है। जो श्रवण-द्वादशीके योगमें इस व्रतका अनुष्ठान करता है, वह इसके प्रभावसे विष्णुलोकमें जाता है।

नाम-कीर्तनकी महिमा तथा श्रीविष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रका वर्णन

ऋषियोंने कहा—सूतजी! आपका हृदय अत्यन्त करुणायुक्त है; अतएव श्रीमहादेवजी और देवर्षि नारदका जो अद्भुत संवाद हुआ था, उसे आपने हमलोगोंसे कहा है। हमलोग श्रद्धापूर्वक सुन रहे हैं। अब आप कृपापूर्वक यह बताइये कि महात्मा नारदने ब्रह्माजीसे भगवन्नामोंकी महिमाका किस प्रकार श्रवण किया था।

सूतजी बोले—द्विजश्रेष्ठ मुनियो! इस विषयमें मैं पुराना इतिहास सुनाता हूँ। आप सब लोग ध्यान देकर सुनें। इसके श्रवणसे भगवान् श्रीकृष्णमें भक्ति बढ़ती है। एक समयकी बात है, चित्तको पूर्ण एकाग्र रखनेवाले नारद-जी अपने पिता ब्रह्माजीका दर्शन करनेके लिये मेरु पर्वतके शिखरपर गये। वहाँ आसनपर बैठे हुए जगत्पति ब्रह्माजी-को प्रणाम करके मुनिश्रेष्ठ नारदजीने इस प्रकार कहा—'विश्वेश्वर! भगवान्के नामकी जितनी शक्ति है, उसे बताइये।

प्रभो ! ये जो सम्पूर्ण विश्वके स्वामी साक्षात् श्रीनारायण हरि हैं, इन अविनाशी परमात्माके नामकी कैसी महिमा है !'

ब्रह्माजी बोले—बेटा ! इस कलियुगमें विशेषतः नाम-कीर्तनपूर्वक भगवान्‌की भक्ति जिस प्रकार करनी चाहिये, वह सुनो। जिनके लिये शास्त्रोंमें कोई प्रायश्चित्त नहीं बताया गया है, उन सभी पापोंकी शुद्धिके लिये एकमात्र विजयशील भगवान् विष्णुका प्रयत्नपूर्वक स्मरण ही सर्वोत्तम साधन देखा गया है, वह समस्त पापोंका नाश करनेवाला है।* अतः श्रीहरिके नामका कीर्तन और जप करना चाहिये। जो ऐसा करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो श्रीविष्णुके परमपदको प्राप्त होता है। जो मनुष्य 'हरि' इस दो अक्षरोंवाले नामका सदा उच्चारण करते हैं, वे उसके उच्चारणमात्रसे मुक्त हो जाते हैं—इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। तपस्याके रूपमें किये जानेवाले जो सम्पूर्ण प्रायश्चित्त हैं, उन सबकी अपेक्षा श्रीकृष्णका निरन्तर स्मरण श्रेष्ठ है। जो मनुष्य प्रातः, सायं, रात्रि तथा मध्याह्न आदिके समय 'नारायण' नामका स्मरण करता है, उसके समस्त पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं।*

उत्तम व्रतका पालन करनेवाले नारद ! मेरा कथन सत्य है, सत्य है, सत्य है। भगवान्‌के नामोंका उच्चारण करनेमात्रसे मनुष्य बड़े-बड़े पापोंसे मुक्त हो जाता है। 'राम-राम-राम-राम' इस प्रकार बारंबार जप करनेवाला मनुष्य यदि चाण्डाल हो तो भी वह पवित्रात्मा हो जाता है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। उसने नाम-कीर्तनमात्रसे कुरुक्षेत्र, काशी, गया और द्वारका आदि सम्पूर्ण तीर्थोंका सेवन कर लिया। जो 'कृष्ण ! कृष्ण ! कृष्ण !' इस प्रकार जप और कीर्तन करता है, वह इस संसारका परित्याग करनेपर भगवान् विष्णुके समीप आनन्द भोगता है। ब्रह्मन् ! जो कलियुगमें प्रसन्नतापूर्वक 'नृसिंह' नामका जप और कीर्तन करता है, वह भगवद्भक्त मनुष्य महान् पापसे छुटकारा पा जाता है। सत्ययुगमें ध्यान, त्रेतामें यज्ञ तथा द्वापरमें पूजन करके मनुष्य जो कुछ पाता है, वही कलियुगमें केवल भगवान् केशवका कीर्तन करनेसे पा लेता है। जो लोग इस बातको जानकर जगदात्मा केशवके भजनमें लीन होते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त हो श्रीविष्णुके परमपदको प्राप्त कर लेते हैं। मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, श्रीराम, श्रीकृष्ण, बुद्ध तथा कल्कि—ये दस अवतार इस पृथ्वीपर बताये गये हैं। इनके नामोच्चारणमात्रसे सदा ब्रह्महत्यारा भी शुद्ध होता है। जो मनुष्य प्रातःकाल जिस किसी तरह भी श्रीविष्णुनामका कीर्तन, जप तथा ध्यान करता है, वह निस्सन्देह मुक्त होता है, निश्चय ही नरसे नारायण बन जाता है।†

---

* दृष्टं परेषां पापानामनुक्तानां विशोधनम्।
विष्णोर्जिष्णोः प्रयत्नेन स्मरणं पापनाशनम्॥ (७२। १०)

* ये वदन्ति नरा नित्यं हरिरित्यक्षरद्वयम्।
तस्योच्चारणमात्रेण विमुक्तास्ते न संशयः॥
प्रायश्चित्तानि सर्वाणि तपःकर्मात्मकानि वै।
यानि तेषामशेषाणां कृष्णानुस्मरणं परम्॥
प्रातर्निशि तथा सायं मध्याह्नादिषु संस्मरन्।
नारायणमवाप्नोति सद्यः पापक्षयं नरः॥ (७२। १२–१४)

† सत्यं सत्यं पुनः सत्यं भाषितं मम सुव्रत।
नामोच्चारणमात्रेण महापापात्प्रमुच्यते॥
राम रामेति रामेति रामेति च पुनर्जपन्।
स चाण्डालोऽपि पूतात्मा जायते नात्र संशयः॥
कुरुक्षेत्रं तथा काशी गया वै द्वारका तथा।
सर्वं तीर्थं कृतं तेन नामोच्चारणमात्रतः॥

सूतजी कहते हैं—यह सुनकर नारदजीको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे अपने पिता ब्रह्माजीसे बोले—'तात! तीर्थसेवनके लिये पृथ्वीपर भ्रमण करनेकी क्या आवश्यकता है; जिनके नामका ऐसा माहात्म्य है कि उसे सुननेमात्रसे मोक्षकी प्राप्ति हो जाती है, उन भगवान्‌का ही स्मरण करना चाहिये। जिस मुखमें 'राम-राम' का जप होता रहता है, वही महान् तीर्थ है, वही प्रधान क्षेत्र है तथा वही समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाला है। सुव्रत! भगवान्‌के कीर्तन करने योग्य कौन-कौन-से नाम हैं? उन सबको विशेष रूपसे बताइये।'

ब्रह्माजीने कहा—बेटा! ये भगवान् विष्णु सर्वत्र-व्यापक सनातन परमात्मा हैं। इनका न आदि है न अन्त। ये लक्ष्मीसे युक्त, सम्पूर्ण भूतोंके आत्मा तथा समस्त प्राणियोंको उत्पन्न करनेवाले हैं। जिनसे मेरा प्रादुर्भाव हुआ है, वे भगवान् विष्णु सदा मेरी रक्षा करें। वही कालके भी काल और वही मेरे पूर्वज हैं। उनका कभी विनाश नहीं होता। उनके नेत्र कमलके समान शोभा पाते हैं। वे परम बुद्धिमान्, अविकारी एवं पुरुष (अन्तर्यामी) हैं। सदा शेषनागकी शय्यापर शयन करनेवाले भगवान् विष्णु सहस्रों मस्तकवाले हैं। वे महाप्रभु हैं। सम्पूर्ण भूत उन्हींके स्वरूप हैं। भगवान् जनार्दन साक्षात् विश्वरूप हैं। कैटभ नामक असुरका वध करनेके कारण वे कैटभारि कहलाते हैं। वे ही व्यापक होनेके कारण विष्णु, धारण-पोषण करनेके कारण धाता और जगदीश्वर हैं। नारद! मैं उनका नाम और गोत्र नहीं जानता। तात! मैं केवल वेदोंका वक्ता हूँ, वेदातीत परमात्माका ज्ञाता नहीं, अतः देवर्षे! तुम वहाँ जाओ, जहाँ भगवान् विश्वनाथ रहते हैं। मुनिश्रेष्ठ! वे तुमसे सम्पूर्ण तत्त्वका वर्णन करेंगे। कैलासके स्वामी श्रीमहादेवजी ही अन्तर्यामी पुरुष हैं। वे देवताओंके स्वामी और सम्पूर्ण भक्तोंके आराध्यदेव हैं। पाँच मुखोंसे सुशोभित भगवान् उमानाथ सब दुःखोंका विनाश करनेवाले हैं। सम्पूर्ण विश्वके ईश्वर श्रीविश्वनाथजी सदा भक्तोंपर दया करनेवाले हैं। नारद! वहीं जाओ, वे तुम्हें सब कुछ बता देंगे।

सूतजी कहते हैं—पिताकी बात सुनकर देवर्षि नारद कैलास पर्वतपर, जहाँ कल्याणप्रद भगवान् विश्वेश्वर नित्य निवास करते हैं, गये। देवताओंद्वारा पूजित देवाधिदेव जगद्गुरु भगवान् शङ्कर कैलासके शिखरपर विराजमान थे। उनके पाँच मुख, दस भुजाएँ, प्रत्येक मुखमें तीन नेत्र तथा हाथोंमें त्रिशूल, कपाल, खट्वाङ्ग, तीक्ष्ण शूल, खड्ग और पिनाक नामका धनुष शोभा पा रहे थे। बैलपर सवारी करनेवाले वरदाता भगवान् भीम अपने अङ्गोंमें भस्म रमाये सर्पोंकी शोभासे युक्त चन्द्रमाका मुकुट पहने करोड़ों सूर्योंके समान देदीप्यमान हो रहे थे। नारदजीने देवेश्वर शिवको साष्टाङ्ग दण्डवत् किया। उन्हें देखकर महादेवजीके नेत्रकमल खिल उठे। उस समय वैष्णवोंमें सर्वश्रेष्ठ शिवने ब्रह्मचारियोंमें श्रेष्ठ नारदजीसे पूछा—'देवर्षिप्रवर! बताओ, कहाँसे आ रहे हो?'

नारदजीने कहा—भगवन्! एक समय मैं ब्रह्माजीके पास गया था। वहाँ उनके मुखसे मैंने भगवान् विष्णुके पापनाशक माहात्म्यका श्रवण किया। सुरश्रेष्ठ! ब्रह्माजीने मेरे सामने भगवान्‌की महिमाका भलीभाँति वर्णन किया। भगवान्‌के नामकी जितनी शक्ति है, वह भी मैंने उनके मुखसे सुनी है। तत्पश्चात् पहले विष्णुके नामोंके विषयमें प्रश्न किया। तब उन्होंने कहा—'नारद! मैं इस बातको नहीं जानता; इसका ज्ञान महारुद्रको है। वे ही सब कुछ बतायेंगे।' यह सुनकर मैं आपके पास आया हूँ। इस घोर कलियुगमें मनुष्योंकी आयु थोड़ी होगी। वे सदा अधर्ममें तत्पर रहेंगे। भगवान्‌के नामोंमें उनकी निष्ठा नहीं होगी। कलियुगके ब्राह्मण पाखण्डी, धर्मसे विरक्त, संध्या न करनेवाले, व्रतहीन, दुष्ट और मलिन होंगे; जैसे ब्राह्मण होंगे, वैसे ही क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा

कृष्ण कृष्णेति कृष्णेति इति वा यो जपन् पठन्।
इहलोकं परित्यज्य मोदते विष्णुसंनिधौ॥
नृसिंहेति मुदा विप्र वर्तते यो जपन् पठन्।
महापापात् प्रमुच्येत कलौ भागवतो नरः॥
ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन्।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्य केशवम्॥
ये तज्ज्ञात्वा निमग्नाश्च जगदात्मनि केशवे।
सर्वपापपरिक्षीणा यान्ति विष्णोः परं पदम्॥
मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नृसिंहो वामनस्तथा।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्की ततः स्मृतः॥
एते दशावताराश्च पृथिव्यां परिकीर्तिताः।
एतेषां नाममात्रेण महाहा शुद्ध्यते सदा॥
प्रातः पठञ्जपन् ध्यायन् विष्णोर्नाम यथा तथा।
मुच्यते नात्र संदेहः स वै नारायणो भवेत्॥

(७२। २०–२९)

अन्य जातिके लोग भी होंगे । प्रायः मनुष्य भगवान्‌के भक्त नहीं होंगे । द्विजोंसे बाहर गिने जानेवाले शूद्र कलियुगमें धर्म-अधर्म तथा हिताहितका ज्ञान भी नहीं रखते; ऐसा जानकर मैं आपके निकट आया हूँ । आप कृपा करके विष्णुके सहस्र नामोंका वर्णन कीजिये, जो पुरुषोंके लिये सौभाग्यजनक, परम उत्तम तथा सर्वदा भक्तिभावको बढ़ानेवाले हैं; इसी प्रकार जो ब्राह्मणोंको ब्रह्मज्ञान, क्षत्रियोंको विजय, वैश्योंको धन तथा शूद्रोंको सदा सुख देनेवाले हैं । सुव्रत! जो सहस्रनाम परम गोपनीय है, उसका वर्णन कीजिये । वह परम पवित्र एवं सदा सर्व-तीर्थमय है; अतः मैं उसका श्रवण करना चाहता हूँ । प्रभो ! विश्वेश्वर ! कृपया उस सहस्रनामका उपदेश कीजिये ।

नारदजीके वचन सुनकर भगवान् शङ्करके नेत्र आश्चर्यसे चकित हो उठे । भगवान् विष्णुके नामका बारंबार स्मरण करके उनके शरीरमें रोमाञ्च हो आया । वे बोले—'ब्रह्मन् ! भगवान् विष्णुके सहस्रनाम परम गोपनीय हैं । इन्हें सुनकर मनुष्य कभी दुर्गतिमें नहीं पड़ता ।' यों कहकर भगवान् शङ्करने नारदजीको विष्णुसहस्रनामका उपदेश दिया, जिसे पूर्वकालमें वे भगवती पार्वतीजीको सुना चुके थे । इस प्रकार नारदजीने कैलास पर्वतपर भगवान् महेश्वरसे श्रीविष्णुसहस्रनामका ज्ञान प्राप्त किया । फिर दैवयोगसे एक बार वे कैलाससे उतरकर नैमिषारण्य नामक तीर्थमें आये । वहाँके ऋषियोंने ऋषिश्रेष्ठ महात्मा नारदको आया देख विशेषरूपसे उनका स्वागत-सत्कार किया । उन्होंने विष्णुभक्त विप्रवर नारदजीके ऊपर फूल बरसाये, पाद्य और अर्घ्य निवेदन किया, उनकी आरती उतारी और फल-मूल निवेदन करके पृथ्वीपर साष्टाङ्ग प्रणाम किया । तत्पश्चात् वे बोले—'महामुने ! हमलोग इस वंशमें जन्म लेकर आज कृतार्थ हो गये; क्योंकि आज हमें परम पवित्र और पापोंका नाश करनेवाला आपका दर्शन प्राप्त हुआ । देवर्षे ! आपके प्रसादसे हमने पुराणोंका श्रवण किया है । ब्रह्मन् ! अब आप यह बताइये कि किस प्रकारसे समस्त पापोंका क्षय हो सकता है । दान, तपस्या, तीर्थ, यज्ञ, योग, ध्यान, इन्द्रिय-निग्रह और शास्त्र-समुदायके बिना ही कैसे मुक्ति प्राप्त हो सकती है ?'

नारदजी बोले—मुनिवरो ! एक समय भगवती पार्वतीने कैलासशिखरपर बैठे हुए अपने प्रियतम देवाधिदेव जगद्गुरु महादेवजीसे इस प्रकार प्रश्न किया ।

पार्वती बोलीं—भगवन् ! आप सर्वज्ञ और सर्वपूजित श्रेष्ठ देवता हैं । जन्म और मृत्युसे रहित, स्वयम्भू एवं सर्वशक्तिमान् हैं । स्वामिन् ! आप सदा किसका ध्यान करते हैं ? किस मन्त्रका जप करते हैं ? देवेश्वर ! इसे जाननेकी मेरे मनमें बड़ी उत्कण्ठा है । सुव्रत ! यदि मैं आपकी प्रियतमा और कृपापात्र हूँ तो मुझसे यथार्थ बात कहिये ।

महादेवजी बोले—देवि ! पहले सत्ययुगमें विशुद्ध चित्तवाले सब पुरुष सम्पूर्ण ईश्वरोंके भी ईश्वर एकमात्र भगवान् विष्णुका तत्त्व जानकर उन्हींके नामोंका जप किया करते थे और उसीके प्रभावसे इस लोक तथा परलोकमें भी परम ऐश्वर्यको प्राप्त करते थे । प्रिये ! तुलादान, अश्वमेध आदि यज्ञ, काशी, प्रयाग आदि तीर्थोंमें किये हुए स्नान आदि शुभ-कर्म, गयामें किये हुए पितरोंके श्राद्ध-तर्पण आदि, वेदोंके स्वाध्याय आदि, जप, उग्र तप, नियम, यम, जीवोंपर दया, गुरुशुश्रूषा, सत्यभाषण, वर्ण और आश्रमके धर्मोंका पालन, ज्ञान तथा ध्यान आदि साधनोंका कोटि जन्मोंतक भलीभाँति अनुष्ठान करनेपर भी मनुष्य परम कल्याणमय सर्वेश्वरेश्वर भगवान् विष्णुको नहीं पाते । परन्तु जो दूसरेका भरोसा न करके सर्वभावसे पुराण पुरुषोत्तम श्रीनारायणकी शरण ग्रहण करते हैं, वे उन्हें प्राप्त कर लेते हैं ।

जो लोग एकमात्र श्रीभगवान् विष्णुके नामोंका कीर्तन करते हैं, वे सुखपूर्वक जिस गतिको प्राप्त करते हैं, उसे अनन्त धार्मिक भी नहीं पा सकते। अतः सदा भगवान् विष्णुका स्मरण करना चाहिये, इन्हें कभी भी भूलना नहीं चाहिये। क्योंकि सभी विधि और निषेध इन्हींके किङ्कर हैं—इन्हींकी आज्ञाका पालन करते हैं।* प्रिये! अब मैं तुमसे भगवान् विष्णुके मुख्य-मुख्य हजार नामोंका वर्णन करूँगा, जो तीनों लोकोंको मुक्ति प्रदान करनेवाले हैं।

विनियोग

अस्य श्रीविष्णोर्नामसहस्रस्तोत्रस्य श्रीमहादेव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, परमात्मा देवता, ह्रीं बीजम्, श्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, चतुर्वर्गधर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः ॥११४॥

इस श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रके महादेवजी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, परमात्मा देवता, ह्रीं बीज, श्रीं शक्ति और क्लीं कीलक हैं। चारों पुरुषार्थ—धर्म, अर्थ काम तथा मोक्षकी प्राप्तिके निमित्त जप करनेके लिये इस स्तोत्रका विनियोग (प्रयोग) किया जाता है ॥११४॥

ॐ वासुदेवाय विद्महे, महाहंसाय धीमहि, तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥११५॥

हम श्रीवासुदेवका तत्त्व समझनेके लिये ज्ञान प्राप्त करते हैं, महाहंसस्वरूप नारायणके लिये ध्यान करते हैं, श्रीविष्णु हमें प्रेरित करें—हमारे मन, बुद्धिको प्रेरणा देकर इस कार्यमें लगायें ॥११५॥

अङ्गन्यासकरन्यासविधिपूर्वं यदा पठेत्।
तत्फलं कोटिगुणितं भवत्येव न संशयः ॥११६॥

यदि पहले अङ्गन्यास और करन्यासकी विधि पूर्ण करके सहस्रनामस्तोत्रका पाठ किया जाय तो निस्सन्देह उसका फल कोटिगुना होता है ॥११६॥

अङ्गन्यास

श्रीवासुदेवः परं ब्रह्मेति हृदयम्। मूलप्रकृतिरिति शिरः। महावराह इति शिखा। सूर्यवंशध्वज इति कवचम्। ब्रह्मादिकाम्यलालित्यजगदाश्चर्यशैशव इति नेत्रम्। पार्थार्थखण्डिताशेष इत्यस्त्रम्। नमो नारायणायेति न्यासं सर्वत्र कारयेत्॥११७॥

'श्रीवासुदेवः परं ब्रह्म' (श्रीवासुदेव परब्रह्म हैं)—यह कहकर दाहिने हाथकी अँगुलियोंसे हृदयका स्पर्श करे। 'मूलप्रकृतिः' (मूल प्रकृति) का उच्चारण करके सिरका स्पर्श करे। 'महावराहः' (महान् वराहरूपधारी भगवान् विष्णु)—यह कहकर शिखाका स्पर्श करे। 'सूर्यवंशध्वजः' (सूर्यवंशकी ध्वजारूप भगवान् श्रीराम) यों कहकर दोनों हाथोंसे दोनों भुजाओंके मूलभागका स्पर्श करे। 'ब्रह्मादिकाम्यलालित्यजगदाश्चर्यशैशवः' (अवतार धारण करनेपर जिनका शिशुरूप अपने अनुपम सौन्दर्यसे संसारको आश्चर्यमें डाल देता है तथा ब्रह्मा आदि देवता भी उस रूपमें जिनकी झाँकी करनेकी अभिलाषा रखते हैं, वे भगवान् विष्णु धन्य हैं) यह कहकर नेत्रोंका स्पर्श करे। 'पार्थार्थखण्डिताशेषः' (अर्जुनके लिये महाभारतके समस्त वीरोंका संहार करानेवाले श्रीकृष्ण) यों कहकर ताली बजाये। अन्तमें 'नमो नारायणाय' (श्रीनारायणको नमस्कार है)—ऐसा बोलकर सर्वाङ्गका स्पर्श करे ॥११७॥*

ॐ नमो नारायणाय पुरुषाय महात्मने, विशुद्धसत्त्वाय महाहंसाय धीमहि, तन्नो देवः प्रचोदयात् ॥११८॥

ॐकाररूप सर्वान्तर्यामी महात्मा नारायणको नमस्कार है, विशुद्ध सत्त्वमय महाहंसस्वरूप श्रीविष्णुका हम ध्यान करते हैं; अतः श्रीविष्णु देवता हमें सत्कार्यमें प्रेरित करें ॥११८॥

क्लीं कृष्णाय विद्महे, ह्रीं रामाय धीमहि, तन्नो देवः प्रचोदयात् ॥११९॥

'क्लीं' रूप श्रीकृष्णतत्त्वको समझनेके लिये हम ज्ञान प्राप्त

---

* स्मर्तव्यः सततं विष्णुर्विस्मर्तव्यो न जातुचित्।
सर्वे विधिनिषेधाः स्युरेतस्यैव हि किङ्कराः ॥

* यहाँ अङ्गन्यासकी विधिका उल्लेख किया गया है; इन्हीं मन्त्रोंसे करन्यास भी किया जा सकता है, उसकी विधि इस प्रकार है। 'श्रीवासुदेवः परं ब्रह्म' यह कहकर दोनों हाथोंके अँगूठोंको परस्पर मिलाये; इसी तरह 'मूलप्रकृतिः' कहकर दोनों तर्जनियोंको, 'महावराहः' का उच्चारण करके दोनों बीचकी अँगुलियोंको, 'सूर्यवंशध्वजः' कहकर दोनों अनामिकाओंको, 'ब्रह्मादिकाम्यलालित्यजगदाश्चर्यशैशवः' का उच्चारण करके दोनों कानी अँगुलियोंको, 'पार्थार्थखण्डिताशेषः' कहकर दोनों हथेलियोंको तथा 'नमो नारायणाय' का उच्चारण करके हथेलियोंके पृष्ठभागोंको परस्पर स्पर्श कराये।

करते हैं; 'ह्रीं' रूप श्रीरामका हम ध्यान करते हैं; वे देव श्रीरघुनाथजी हमें प्रेरित करें ॥११९॥

शं नृसिंहाय विद्महे, श्रीकण्ठाय धीमहि, तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥१२०॥

शम्—कल्याणमय भगवान् नृसिंहका तत्त्व जाननेके लिये हम ज्ञान प्राप्त करते हैं, श्रीकण्ठका ध्यान करते हैं; वे श्रीनृसिंहरूप भगवान् विष्णु हमें प्रेरित करें ॥१२०॥

ॐ वासुदेवाय विद्महे, देवकीसुताय धीमहि, तन्नः कृष्णः प्रचोदयात् ॥१२१॥

ॐकाररूप श्रीवासुदेवका तत्त्व जाननेके लिये हम ज्ञान प्राप्त करते हैं, श्रीदेवकीनन्दन श्रीकृष्णका हम ध्यान करते हैं, वे श्रीकृष्ण हमें प्रेरित करें ॥१२१॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय नमः स्वाहा ॥१२२॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः क्लीं—सच्चिदानन्दस्वरूप, गोपीजनोंके प्रियतम भगवान् गोविन्दको नमस्कार है; हम उनकी तृप्तिके लिये उत्तम रीतिसे हवन करते हैं—अपना सब कुछ अर्पण करते हैं ॥१२२॥

इति मन्त्रं समुच्चार्य यजेद् वा विष्णुमव्ययम् ।
श्रीनिवासं जगन्नाथं ततः स्तोत्रं पठेत् सुधीः ॥
ॐ वासुदेवः परं ब्रह्म परमात्मा परात्परः ॥१२३॥

—उपर्युक्त मन्त्रोंका उच्चारण करके लक्ष्मीके निवासस्थान और संसारके स्वामी अविनाशी भगवान् श्रीविष्णुका पूजन करे; इसके बाद विद्वान् पुरुष सहस्रनाम स्तोत्रका पाठ करे । ॐ सच्चिदानन्दस्वरूप, १ **वासुदेवः**—सम्पूर्ण प्राणियोंको अपनेमें बसानेवाले तथा समस्त भूतोंमें सर्वात्मारूपसे बसनेवाले, चतुर्व्यूहमें वासुदेवस्वरूप, २ **परं ब्रह्म**—सर्वोत्कृष्ट ब्रह्म—निर्गुण परमात्मा, ३ **परमात्मा**—परम श्रेष्ठ, नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्तस्वभाव, ४ **परात्परः**—पर अर्थात् प्रकृतिसे भी परे विराजमान परमात्मा ॥१२३॥

परं धाम परं ज्योतिः परं तत्त्वं परं पदम् ।
परः शिवः परो ध्येयः परं ज्ञानं परा गतिः ॥१२४॥

५ **परं धाम**—सर्वोत्तम वैकुण्ठधाम, निर्गुण परमात्मा, ६ **परं ज्योतिः**—सूर्य आदि ज्योतियोंको भी प्रकाशित करनेवाले सर्वोत्कृष्ट ज्योतिःस्वरूप, ७ **परं तत्त्वम्**—परम तत्त्व, उपनिषदोंसे जाननेयोग्य सर्वोत्तम रहस्य, ८ **परं पदम्**—प्राप्त करनेयोग्य सर्वोत्कृष्ट पद, मोक्षस्वरूप, ९ **परः शिवः**—परम कल्याणरूप, १० **परो ध्येयः**—ध्यान करनेयोग्य सर्वोत्तम देव, चिन्तनके सर्वश्रेष्ठ आश्रय, ११ **परं ज्ञानम्**—भ्रान्तिशून्य उत्कृष्ट बोधस्वरूप परमात्मा, १२ **परा गतिः**—सर्वोत्तम गति, मोक्षस्वरूप ॥१२४॥

परमार्थः परश्रेष्ठः परानन्दः परोदयः ।
परोऽव्यक्तात्परं व्योम परमर्द्धिः परेश्वरः ॥१२५॥

१३ **परमार्थः**—मोक्षरूप परम पुरुषार्थ, परम सत्य, १४ **परश्रेष्ठः**—श्रेष्ठसे भी श्रेष्ठ, १५ **परानन्दः**—परम आनन्दमय, असीम आनन्दकी निधि, १६ **परोदयः**—सर्वाधिक अभ्युदयशाली, १७ **अव्यक्तात्परः**—अव्यक्तपदवाच्य मूलप्रकृतिसे पर, १८ **परं व्योम**—नित्य एवं अनन्त आकाशस्वरूप निर्गुण परमात्मा, १९ **परमर्द्धिः**—सर्वोत्तम ऐश्वर्यसे सम्पन्न, २० **परेश्वरः**—पर अर्थात् ब्रह्मादि देवताओंके भी ईश्वर ॥१२५॥

निरामयो निर्विकारो निर्विकल्पो निराश्रयः ।
निरञ्जनो निरालम्बो निर्लेपो निरवग्रहः ॥१२६॥

२१ **निरामयः**—रोग-शोकसे रहित, २२ **निर्विकारः**—उत्पत्ति, सत्ता, वृद्धि, विपरिणाम, अपक्षय और विनाश—इन छः विकारोंसे शून्य, २३ **निर्विकल्पः**—सन्देहरहित, संकल्पशून्य, २४ **निराश्रयः**—स्वयं ही सबके आश्रय होनेके कारण अन्य किसी आश्रयसे रहित, २५ **निरञ्जनः**—वासना और आसक्तिरूपी मलसे शून्य, तमोगुणरहित, २६ **निरालम्बः**—आधारशून्य, स्वयं ही सबके आधार, २७ **निर्लेपः**—जलसे कमलकी भाँति राग-द्वेषादि दोषोंसे अलिप्त, २८ **निरवग्रहः**—विघ्न-बाधाओंसे रहित ॥१२६॥

निर्गुणो निष्कलोऽनन्तोऽभयोऽचिन्त्योऽचलोऽर्चितः ।
अतीन्द्रियोऽमितोऽपारो नित्योऽनीहोऽव्ययोऽक्षयः ।१२७।

२९ **निर्गुणः**—सत्त्व, रज और तम—इन तीनों गुणोंसे रहित परमात्मा, ३० **निष्कलः**—अवयवशून्य ब्रह्म, ३१ **अनन्तः**—असीम एवं अविनाशी परमेश्वर, ३२ **अभयः**—काल आदिके भयसे रहित, ३३ **अचिन्त्यः**—मनकी गतिसे परे होनेके कारण चिन्तनमें न आनेवाले, ३४ **अचलः**—अपनी मर्यादासे विचलित न होनेवाले, ३५ **अर्चितः**—सबके द्वारा पूजित, ३६ **अतीन्द्रियः**—इन्द्रियोंके अगोचर, ३७ **अमितः**—माप या सीमासे रहित,

महान्, अपरिच्छिन्न, ३८ **अपारः**—पाररहित, अनन्त, ३९ **नित्यः**—सदा रहनेवाले, सनातन, ४० **अनीहः**—चेष्टारहित ब्रह्म, ४१ **अव्ययः**—विनाशरहित, ४२ **अक्षयः**—कभी क्षीण न होनेवाले ॥१२७॥

सर्वज्ञः सर्वगः सर्वः सर्वदः सर्वभावनः ।
सर्वशास्ता सर्वसाक्षी पूज्यः सर्वस्य सर्वदृक् ॥१२८॥

४३ **सर्वज्ञः**—परोक्ष और अपरोक्ष सबके ज्ञाता, ४४ **सर्वगः**—कारणरूपसे सर्वत्र व्याप्त रहनेवाले, ४५ **सर्वः**—सर्वस्वरूप, ४६ **सर्वदः**—भक्तोंको सर्वस्व देनेवाले, ४७ **सर्वभावनः**—सबको उत्पन्न करनेवाले, ४८ **सर्वशास्ता**—सबके शासक, ४९ **सर्वसाक्षी**—भूत, भविष्य और वर्तमान—सबपर दृष्टि रखनेवाले, ५० **सर्वस्य पूज्यः**—सबके पूजनीय, ५१ **सर्वदृक**—सबके द्रष्टा ॥१२८॥

सर्वशक्तिः सर्वसारः सर्वात्मा सर्वतोमुखः ।
सर्ववासः सर्वरूपः सर्वादिः सर्वदुःखहा ॥१२९॥

५२ **सर्वशक्तिः**—सब प्रकारकी शक्तियोंसे सम्पन्न, ५३ **सर्वसारः**—सबके बल, ५४ **सर्वात्मा**—सबके आत्मा, ५५ **सर्वतोमुखः**—सब ओर मुखवाले, विराट् स्वरूप, ५६ **सर्ववासः**—सम्पूर्ण विश्वके वासस्थान, ५७ **सर्वरूपः**—सब रूपोंमें स्वयं ही उपलब्ध होनेवाले, विश्वरूप, ५८ **सर्वादिः**—सबके आदि कारण, ५९ **सर्वदुःखहा**—सबके दुःखोंका नाश करनेवाले ॥१२९॥

सर्वार्थः सर्वतोभद्रः सर्वकारणकारणम् ।
सर्वातिशयितः सर्वाध्यक्षः सर्वेश्वरेश्वरः ॥१३०॥

६० **सर्वार्थः**—समस्त पुरुषार्थरूप, ६१ **सर्वतोभद्रः**—सब ओरसे कल्याणरूप, ६२ **सर्वकारणकारणम्**—विश्वके कारणभूत प्रकृति आदिके भी कारण, ६३ **सर्वातिशयितः**—सबसे सब बातोंमें बढ़े हुए, ब्रह्मा और शिव आदिसे भी अधिक महिमावाले, ६४ **सर्वाध्यक्षः**—सबके साक्षी, सबके नियन्ता, ६५ **सर्वेश्वरेश्वरः**—सम्पूर्ण ईश्वरोंके भी ईश्वर, ब्रह्मादि देवताओंके भी नियामक ॥१३०॥

षड्विंशको महाविष्णुर्महागुह्यो महाविभुः ।
नित्योदितो नित्ययुक्तो नित्यानन्दः सनातनः ॥१३१॥

६६ **षड्विंशकः**—पचीस तत्त्वोंसे विलक्षण छब्बीसवाँ तत्त्व, पुरुषोत्तम, ६७ **महाविष्णुः**—सब देवताओंमें महान् सर्वव्यापी भगवान् विष्णु, ६८ **महागुह्यः**—परम गोपनीय तत्त्व, ६९ **महाविभुः**—प्राकृत आकाश आदि व्यापक तत्त्वोंसे भी महान् एवं व्यापक, ७० **नित्योदितः**—सूर्य आदिकी भाँति अस्त न होकर नित्य-निरन्तर उदित रहनेवाले, ७१ **नित्ययुक्तः**—चराचर प्राणियोंसे नित्य संयुक्त, अथवा सदा योगमें स्थित रहनेवाले, ७२ **नित्यानन्दः**—नित्य आनन्दस्वरूप, ७३ **सनातनः**—सदा एकरस रहनेवाले ॥१३१॥

मायापतिर्योगपतिः कैवल्यपतिरात्मभूः ।
जन्ममृत्युजरातीतः कालातीतो भवातिगः ॥१३२॥

७४ **मायापतिः**—मायाके स्वामी, ७५ **योगपतिः**—योगपालक, योगेश्वर, ७६ **कैवल्यपतिः**—मोक्ष प्रदान करनेका अधिकार रखनेवाले, मुक्तिके स्वामी, ७७ **आत्मभूः**—स्वतः प्रकट होनेवाले, स्वयम्भू, ७८ **जन्ममृत्युजरातीतः**—जन्म, मरण और वृद्धावस्था आदि शरीरके धर्मोंसे रहित, ७९ **कालातीतः**—कालके वशमें न आनेवाले, ८० **भवातिगः**—भवबन्धनसे अतीत ॥१३२॥

पूर्णः सत्यः शुद्धबुद्धस्वरूपो नित्यचिन्मयः ।
योगप्रियो योगगम्यो भवबन्धैकमोचकः ॥१३३॥

८१ **पूर्णः**—समस्त ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य और गुणोंसे परिपूर्ण, ८२ **सत्यः**—भूत, भविष्य और वर्तमान—तीनों कालोंमें सदा समानरूपसे रहनेवाले, सत्यस्वरूप, ८३ **शुद्धबुद्धस्वरूपः**—स्वाभाविक शुद्धि और ज्ञानसे सम्पन्न, प्रकृतिके संसर्गसे रहित बोधस्वरूप परमात्मा, ८४ **नित्यचिन्मयः**—नित्य चैतन्यस्वरूप, ८५ **योगप्रियः**—चित्तवृत्तियोंके निरोधरूप योगके प्रेमी, ८६ **योगगम्यः**—ध्यान अथवा समाधिके द्वारा अनुभवमें आनेयोग्य, ८७ **भवबन्धैकमोचकः**—संसार-बन्धनसे एकमात्र छुड़ानेवाले ॥१३३॥

पुराणपुरुषः प्रत्यक्चैतन्यः पुरुषोत्तमः ।
वेदान्तवेद्यो दुर्ज्ञेयस्तापत्रयविवर्जितः ॥१३४॥

८८ **पुराणपुरुषः**—ब्रह्मा आदि पुरुषोंकी अपेक्षा भी प्राचीन, आदि पुरुष, ८९ **प्रत्यक्चैतन्यः**—अन्तर्यामी

---

१. पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच इन्द्रियोंके विषय, मन, पाँच भूत, अहंकार, महत्तत्त्व, प्रकृति और पुरुष (जीवात्मा)—ये पचीस तत्त्व हैं। इनसे भिन्न सर्वज्ञ परमात्मा छब्बीसवाँ तत्त्व है। इसीलिये इसे 'षड्विंशक' कहा गया है।

चेतन, ९० **पुरुषोत्तमः**—क्षर और अक्षर पुरुषोंसे श्रेष्ठ, ९१ **वेदान्तवेद्यः**—उपनिषदोंके द्वारा जाननेयोग्य, ९२ **दुर्ज्ञेयः**—कठिनतासे अनुभवमें आनेवाले, ९३ **तापत्रयविवर्जितः**—आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—तीनों तापोंसे रहित ॥१३४॥

ब्रह्मविद्याश्रयोऽनघः स्वप्रकाशः स्वयम्प्रभुः ।
सर्वोपाय उदासीनः प्रणवः सर्वतः समः ॥१३५॥

९४ **ब्रह्मविद्याश्रयः**—ब्रह्मविद्याके आश्रय, उसके द्वारा जाननेमें आनेवाले ब्रह्म, ९५ **अनघः**—पापरहित, शुद्ध, ९६ **स्वप्रकाशः**—अपने ही प्रकाशसे प्रकाशित होनेवाले, ९७ **स्वयंप्रभुः**—दूसरेकी सामर्थ्यकी अपेक्षासे रहित, स्वयं समर्थ, ९८ **सर्वोपायः**—सर्वसाधनरूप, ९९ **उदासीनः**—राग-द्वेषसे ऊपर उठे हुए, पक्षपातरहित, १०० **प्रणवः**—ओंकाररूप शब्दब्रह्म, १०१ **सर्वतः समः**—सब ओर समान दृष्टि रखनेवाले ॥१३५॥

सर्वानवद्यो दुष्प्राप्यस्तुरीयस्तमसः परः ।
कूटस्थः सर्वसंश्लिष्टो वाङ्मनोगोचरातिगः ॥१३६॥

१०२ **सर्वानवद्यः**—सबकी प्रशंसाके पात्र, सबके द्वारा स्तुत्य, १०३ **दुष्प्राप्यः**—अनन्य चित्तसे भजन न करनेवालोंके लिये दुर्लभ, १०४ **तुरीयः**—जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति—इन तीनों अवस्थाओंसे अतीत चतुर्थावस्थास्वरूप, १०५ **तमसः परः**—तमोगुण एवं अज्ञानसे परे, १०६ **कूटस्थः**—निहाईकी भाँति अविचलरूपसे स्थिर रहनेवाला निर्विकार आत्मा, १०७ **सर्वसंश्लिष्टः**—सर्वत्र व्यापक होनेके कारण सबसे संयुक्त, १०८ **वाङ्मनोगोचरातिगः**—वाणी और मनकी पहुँचसे बाहर ॥१३६॥

संकर्षणः सर्वहरः कालः सर्वभयंकरः ।
अनुल्लङ्घ्यश्चित्रगतिर्महारुद्रो दुरासदः ॥१३७॥

१०९ **संकर्षणः**—कालरूपसे सबको अपनी ओर खींचनेवाले, चतुर्व्यूहमें सङ्कर्षणरूप, शेषावतार बलराम, ११० **सर्वहरः**—प्रलयकालमें सबका संहार करनेवाले, १११ **कालः**—युग, वर्ष, मास, पक्ष आदि रूपसे सम्पूर्ण विश्वको अपना ग्रास बनानेवाले, कालपदवाच्य यमराज, ११२ **सर्वभयंकरः**—मृत्युरूपसे सबको भय पहुँचानेवाले, ११३ **अनुल्लङ्घ्यः**—काल आदि भी जिनकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं कर सकते, ऐसे सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर, ११४ **चित्रगतिः**—विचित्र लीलाएँ करनेवाले लीलापुरुषोत्तम अथवा विचित्र गतिसे चलनेवाले, ११५ **महारुद्रः**—महान् दुःखोंको दूर भगानेवाले, ग्यारह रुद्रोंकी अपेक्षा भी महान् महेश्वररूप, ११६ **दुरासदः**—बड़े-बड़े दानवोंके लिये भी जिनका सामना करना कठिन है, ऐसे दुर्धर्ष वीर ॥१३७॥

मूलप्रकृतिरानन्दः प्रद्युम्नो विश्वमोहनः ।
महामायो विश्वबीजं परशक्तिः सुखैकभूः ॥१३८॥

११७ **मूलप्रकृतिः**—सम्पूर्ण विश्वके महाकारणस्वरूप, ११८ **आनन्दः**—सब ओरसे सुख प्रदान करनेवाले, आनन्दस्वरूप, ११९ **प्रद्युम्नः**—महान् बलवाले कामदेव, चतुर्व्यूहमें प्रद्युम्नस्वरूप, १२० **विश्वमोहनः**—अपने अलौकिक रूपलावण्यसे सम्पूर्ण विश्वको मोहित करनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण, १२१ **महामायः**—मायावियोंपर भी माया डालनेवाले महान् मायावी, १२२ **विश्वबीजम्**—जगत्की उत्पत्तिके आदि कारण, १२३ **परशक्तिः**—महान् सामर्थ्यशाली, १२४ **सुखैकभूः**—सुखके एकमात्र उत्पत्तिस्थान ॥१३८॥

सर्वकाम्योऽनन्तलीलः सर्वभूतवशंकरः ।
अनिरुद्धः सर्वजीवो हृषीकेशो मनःपतिः ॥१३९॥

१२५ **सर्वकाम्यः**—सबकी कामनाके विषय, १२६ **अनन्तलीलः**—जिनकी लीलाओंका अन्त नहीं है—ऐसे भगवान्, १२७ **सर्वभूतवशंकरः**—सम्पूर्ण प्राणियोंको अपने वशमें करनेवाले, १२८ **अनिरुद्धः**—संग्राममें जिनकी गतिको कोई रोक नहीं सकता—ऐसे पराक्रमी शूरवीर, चतुर्व्यूहमें अनिरुद्धस्वरूप, १२९ **सर्वजीवः**—सबको जीवन प्रदान करनेवाले, सबके आत्मा, १३० **हृषीकेशः**—इन्द्रियोंके स्वामी, १३१ **मनःपतिः**—मनके स्वामी, हृदयेश्वर ॥१३९॥

निरुपाधिप्रियो हंसोऽक्षरः सर्वनियोजकः ।
ब्रह्मप्राणेश्वरः सर्वभूतभृद् देहनायकः ॥१४०॥

१३२ **निरुपाधिप्रियः**—जिनकी बुद्धिसे उपाधिकृत भेद-भ्रम दूर हो गये हैं, उन ज्ञानी परमहंसोंके भी प्रियतम, १३३ **हंसः**—हंसरूप धारण करके सनकादिकोंको उपदेश करनेवाले, १३४ **अक्षरः**—कभी नष्ट न होनेवाले, आत्मा, १३५ **सर्वनियोजकः**—सबको विभिन्न कर्मोंमें लगानेवाले, सबके प्रेरक, सबके स्वामी, १३६ **ब्रह्मप्राणेश्वरः**—ब्रह्माजीके प्राणोंके स्वामी, १३७ **सर्वभूतभृत्**—सम्पूर्ण भूतोंका भरण-पोषण

करनेवाले, १३८ देहनायकः—शरीरका सञ्चालन करनेवाले ॥१४०॥

क्षेत्रज्ञः प्रकृतिस्वामी पुरुषो विश्वसूत्रधृक्।
अन्तर्यामी त्रिधामान्तःसाक्षी निर्गुण ईश्वरः ॥१४१॥

१३९ क्षेत्रज्ञः—सम्पूर्ण क्षेत्रों (शरीरों) में स्थित होकर उनका ज्ञान रखनेवाले, १४० प्रकृतिस्वामी—जगत्की कारणभूत प्रकृतिके स्वामी, १४१ पुरुषः—समस्त शरीरोंमें शयन करनेवाले अन्तर्यामी, १४२ विश्वसूत्रधृक—संसाररूपी नाटकके सूत्रधार, १४३ अन्तर्यामी—अन्तःकरणमें विराजमान परमेश्वर, १४४ त्रिधामा—भूः-भुवः-स्वःरूप तीन धामवाले, त्रिलोकीमें व्याप्त, १४५ अन्तःसाक्षी—अन्तःकरणके द्रष्टा, १४६ निर्गुणः—गुणातीत, १४७ ईश्वरः—सम्पूर्ण ऐश्वर्यसे सम्पन्न ॥१४१॥

योगिगम्यः पद्मनाभः शेषशायी श्रियः पतिः।
श्रीशिवोपास्यपादाब्जो नित्यश्रीः श्रीनिकेतनः ॥१४२॥

१४८ योगिगम्यः—योगियोंके अनुभवमें आनेवाले, १४९ पद्मनाभः—अपनी नाभिसे कमल प्रकट करनेवाले, १५० शेषशायी—शेषनागकी शय्यापर शयन करनेवाले, १५१ श्रियःपतिः—लक्ष्मीके स्वामी, १५२ श्रीशिवोपास्यपादाब्जः—पार्वतीसहित भगवान् शिव जिनके चरणकमलोंकी उपासना करते हैं, वे भगवान् विष्णु, १५३ नित्यश्रीः—कभी विलग न होनेवाली लक्ष्मीकी शोभासे युक्त, १५४ श्रीनिकेतनः—भगवती लक्ष्मीके हृदय-मन्दिरमें निवास करनेवाले ॥१४२॥

नित्यवक्षःस्थलस्थश्रीः श्रीनिधिः श्रीधरो हरिः।
वश्यश्रीर्निश्चलश्रीदो विष्णुः क्षीराब्धिमन्दिरः ॥१४३॥

१५५ नित्यवक्षःस्थलस्थश्रीः—जिनके वक्षःस्थलमें लक्ष्मी सदा निवास करती हैं—ऐसे भगवान् विष्णु, १५६ श्रीनिधिः—शोभाके भण्डार, सब प्रकारकी सम्पत्तियोंके आधार, १५७ श्रीधरः—जगज्जननी श्रीको हृदयमें धारण करनेवाले, १५८ हरिः—पापहारी, भक्तोंका मन हर लेनेवाले, १५९ वश्यश्रीः—लक्ष्मीको सदा अपने वशमें रखनेवाले, १६० निश्चलश्रीदः—स्थिर सम्पत्ति प्रदान करनेवाले, १६१ विष्णुः—सर्वत्र व्यापक, १६२ क्षीराब्धिमन्दिरः—क्षीरसागरको अपना निवास-स्थान बनानेवाले ॥१४३॥

कौस्तुभोद्भासितोरस्को माधवो जगदार्तिहा।
श्रीवत्सवक्षा निःसीमकल्याणगुणभाजनम् ॥१४४॥

१६३ कौस्तुभोद्भासितोरस्कः—कौस्तुभमणिकी प्रभासे उद्भासित हृदयवाले, १६४ माधवः—जगन्माता लक्ष्मीके स्वामी अथवा मधुवंशमें प्रादुर्भूत भगवान् श्रीकृष्ण, १६५ जगदार्तिहा—समस्त संसारकी पीडा दूर करनेवाले, १६६ श्रीवत्सवक्षाः—वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न धारण करनेवाले, १६७ निःसीमकल्याणगुणभाजनम्—सीमारहित कल्याणमय गुणोंके आधार ॥१४४॥

पीताम्बरो जगन्नाथो जगत्त्राता जगत्पिता।
जगद्बन्धुर्जगत्स्रष्टा जगद्धाता जगन्निधिः ॥१४५॥

१६८ पीताम्बरः—पीत वस्त्रधारी, १६९ जगन्नाथः—जगत्के स्वामी, १७० जगत्त्राता—सम्पूर्ण विश्वके रक्षक, १७१ जगत्पिता—समस्त संसारके जन्मदाता, १७२ जगद्बन्धुः—बन्धुकी भाँति जगत्के जीवोंकी सहायता करनेवाले, १७३ जगत्स्रष्टा—जगत्की सृष्टि करनेवाले ब्रह्मारूप, १७४ जगद्धाता—अखिल विश्वका धारण-पोषण करनेवाले विष्णुरूप, १७५ जगन्निधिः—प्रलयके समय सम्पूर्ण जगत्को बीजरूपमें धारण करनेवाले ॥१४५॥

जगदेकस्फुरद्वीर्यो नाहंवादी जगन्मयः।
सर्वाश्चर्यमयः सर्वसिद्धार्थः सर्वरञ्जितः ॥१४६॥

१७६ जगदेकस्फुरद्वीर्यः—संसारमें एकमात्र विख्यात पराक्रमी, १७७ नाहंवादी—अहङ्काररहित, १७८ जगन्मयः—विश्वरूप, १७९ सर्वाश्चर्यमयः—जिनका सब कुछ आश्चर्यमय है—ऐसे अथवा सम्पूर्ण आश्चर्योंसे युक्त, १८० सर्वसिद्धार्थः—पूर्णकाम होनेके कारण जिनके सभी प्रयोजन सदा सिद्ध हैं—ऐसे परमेश्वर, १८१ सर्वरञ्जितः—देवता, दानव और मानव आदि सभी प्राणी जिन्हें रिझानेकी चेष्टामें लगे रहते हैं—ऐसे भगवान् ॥१४६॥

सर्वामोघोद्यमो ब्रह्मरुद्राद्युत्कृष्टचेतनः।
शम्भोः पितामहो ब्रह्मपिता शक्राद्यधीश्वरः ॥१४७॥

१८२ सर्वामोघोद्यमः—जिनके सम्पूर्ण उद्योग सफल होते हैं, कभी व्यर्थ नहीं जाते—ऐसे भगवान् विष्णु, १८३ ब्रह्मरुद्राद्युत्कृष्टचेतनः—ब्रह्मा और रुद्र आदिसे उत्कृष्ट चेतनावाले, १८४ शम्भोः पितामहः—शङ्करजीके पिता भगवान् ब्रह्माको भी जन्म देनेवाले श्रीविष्णु, १८५

ब्रह्मपिता—ब्रह्माजीको उत्पन्न करनेवाले, १८६ **शक्राद्यधीश्वरः**—इन्द्र आदि देवताओंके स्वामी ॥१४७॥

सर्वदेवप्रियः सर्वदेवमूर्तिरनुत्तमः ।
सर्वदेवैकशरणं सर्वदेवैकदेवता ॥१४८॥

१८७ **सर्वदेवप्रियः**—सम्पूर्ण देवताओंके प्रिय, १८८ **सर्वदेवमूर्तिः**—समस्त देवस्वरूप, १८९ **अनुत्तमः**—जिनसे उत्तम दूसरा कोई नहीं है, सर्वश्रेष्ठ, १९० **सर्वदेवैकशरणम्**—समस्त देवताओंके एकमात्र आश्रय, १९१ **सर्वदेवैकदेवता**—सम्पूर्ण देवताओंके एकमात्र आराध्य देव ॥१४८॥

यज्ञभुग्यज्ञफलदो यज्ञेशो यज्ञभावनः ।
यज्ञत्राता यज्ञपुमान्वनमाली द्विजप्रियः ॥१४९॥

१९२ **यज्ञभुक्**—समस्त यज्ञोंके भोक्ता, १९३ **यज्ञफलदः**—सम्पूर्ण यज्ञोंका फल देनेवाले, १९४ **यज्ञेशः**—यज्ञोंके स्वामी, १९५ **यज्ञभावनः**—अपनी वेदमयी वाणीके द्वारा यज्ञोंको प्रकट करनेवाले, १९६ **यज्ञत्राता**—यज्ञविरोधी असुरोंका वध करके यज्ञोंकी रक्षा करनेवाले, १९७ **यज्ञपुमान्**—यज्ञपुरुष, यज्ञाधिष्ठाता देवता, १९८ **वनमाली**—परम मनोहर वनमाला धारण करनेवाले, १९९ **द्विजप्रियः**—ब्राह्मणोंके प्रेमी और प्रियतम ॥१४९॥

द्विजैकमानदो विप्रकुलदेवोऽसुरान्तकः ।
सर्वदुष्टान्तकृत्सर्वसज्जनानन्यपालकः ॥१५०॥

२०० **द्विजैकमानदः**—ब्राह्मणोंको एकमात्र सम्मान देनेवाले, २०१ **विप्रकुलदेवः**—ब्राह्मणवंशको अपना आराध्यदेव माननेवाले, २०२ **असुरान्तकः**—संसारमें अशान्ति फैलानेवाले असुरोंके प्राणहन्ता, २०३ **सर्वदुष्टान्तकृत्**—समस्त दुष्टोंका अन्त करनेवाले, २०४ **सर्वसज्जनानन्यपालकः**—सम्पूर्ण साधु पुरुषोंके एकमात्र पालक ॥१५०॥

सप्तलोकैकजठरः सप्तलोकैकमण्डनः ।
सृष्टिस्थित्यन्तकृच्चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ॥१५१॥

२०५ **सप्तलोकैकजठरः**—भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक—इन सातों लोकोंको अपने एकमात्र उदरमें स्थापित करनेवाले, २०६ **सप्तलोकैकमण्डनः**—सातों लोकोंके एकमात्र शृङ्गार-अपनी ही शोभासे समस्त लोकोंको विभूषित करनेवाले, २०७ **सृष्टिस्थित्यन्तकृत्**—संसारकी सृष्टि, पालन और संहार करनेवाले, २०८ **चक्री**—सुदर्शन चक्र धारण करनेवाले, २०९ **शार्ङ्गधन्वा**—शार्ङ्गनामक धनुष धारण करनेवाले, २१० **गदाधरः**—कौमोदकी नामकी गदा धारण करनेवाले ॥१५१॥

शङ्खभृन्नन्दकी पद्मपाणिर्गरुडवाहनः ।
अनिर्देश्यवपुः सर्वपूज्यस्त्रैलोक्यपावनः ॥१५२॥

२११ **शङ्खभृत्**—एक हाथमें पाञ्चजन्य नामक शङ्ख लिये रहनेवाले, २१२ **नन्दकी**—नन्दक नामक खड्ग (तलवार) बाँधनेवाले, २१३ **पद्मपाणिः**—हाथमें कमल धारण करनेवाले, २१४ **गरुडवाहनः**—पक्षियोंके राजा विनतानन्दन गरुड़पर सवारी करनेवाले, २१५ **अनिर्देश्यवपुः**—जिसके दिव्यस्वरूपका किसी प्रकार भी वर्णन या संकेत न किया जा सके—ऐसे अनिर्वचनीय शरीरवाले, २१६ **सर्वपूज्यः**—देवता, दानव और मनुष्य आदि—सबके पूजनीय, २१७ **त्रैलोक्यपावनः**—अपने दर्शन और स्पर्श आदिसे त्रिभुवनको पावन बनानेवाले ॥१५२॥

अनन्तकीर्तिर्निःसीमपौरुषः सर्वमङ्गलः ।
सूर्यकोटिप्रतीकाशो यमकोटिदुरासदः ॥१५३॥

२१८ **अनन्तकीर्तिः**—शेष और शारदा भी जिनकी कीर्तिका पार न पा सकें—ऐसे अपार सुयशवाले, २१९ **निःसीमपौरुषः**—असीम पुरुषार्थवाले, अमितपराक्रमी, २२० **सर्वमङ्गलः**—सबका मङ्गल करनेवाले अथवा सबके लिये मङ्गलरूप, २२१ **सूर्यकोटिप्रतीकाशः**—करोड़ों सूर्योंके समान तेजस्वी, २२२ **यमकोटिदुरासदः**—करोड़ों यमराजोंके लिये भी दुर्धर्ष ॥१५३॥

कन्दर्पकोटिलावण्यो दुर्गाकोट्यरिमर्दनः ।
समुद्रकोटिगम्भीरस्तीर्थकोटिसमाह्वयः ॥१५४॥

२२३ **कन्दर्पकोटिलावण्यः**—करोड़ों कामदेवोंके समान मनोहर कान्तिवाले, २२४ **दुर्गाकोट्यरिमर्दनः**—करोड़ों दुर्गाओंके समान शत्रुओंको रौंद डालनेवाले, २२५ **समुद्रकोटिगम्भीरः**—करोड़ों समुद्रोंके समान गम्भीर, २२६ **तीर्थकोटिसमाह्वयः**—करोड़ों तीर्थोंके समान पावन नामवाले ॥१५४॥

ब्रह्मकोटिजगत्स्रष्टा वायुकोटिमहाबलः ।
कोटीन्दुजगदानन्दी शम्भुकोटिमहेश्वरः ॥१५५॥

२२७ ब्रह्मकोटिजगत्स्रष्टा—करोड़ों ब्रह्माओंके समान संसारकी सृष्टि करनेवाले, २२८ वायुकोटिमहाबलः—करोड़ों वायुओंके तुल्य महाबली, २२९ कोटीन्दुजगदानन्दी—करोड़ों चन्द्रमाओंकी भाँति जगत्को आनन्द प्रदान करनेवाले, २३० शम्भुकोटिमहेश्वरः—करोड़ों शङ्करोंके समान महेश्वर (महान् ऐश्वर्यशाली) ॥१५५॥

कुबेरकोटिलक्ष्मीवाञ्छक्रकोटिविलासवान् ।
हिमवत्कोटिनिष्कम्पः कोटिब्रह्माण्डविग्रहः ॥१५६॥

२३१ कुबेरकोटिलक्ष्मीवान्—करोड़ों कुबेरोंके समान सम्पत्तिशाली, २३२ शक्रकोटिविलासवान्—करोड़ों इन्द्रोंके सदृश भोग-विलासके साधनोंसे परिपूर्ण, २३३ हिमवत्कोटिनिष्कम्पः—करोड़ों हिमालयोंकी भाँति अचल, २३४ कोटिब्रह्माण्डविग्रहः—अपने श्रीविग्रहमें कोटि-कोटि ब्रह्माण्डोंको धारण करनेवाले, महाविराट्रूप ॥१५६॥

कोट्यश्वमेधपापघ्नो यज्ञकोटिसमार्चनः ।
सुधाकोटिस्वास्थ्यहेतुः कामधुक्कोटिकामदः ॥१५७॥

२३५ कोट्यश्वमेधपापघ्नः—करोड़ों अश्वमेध यज्ञोंके समान पापनाशक, २३६ यज्ञकोटिसमार्चनः—करोड़ों यज्ञोंके तुल्य पूजन-सामग्रीसे पूजित होनेवाले, २३७ सुधाकोटिस्वास्थ्यहेतुः—कोटि-कोटि अमृतके तुल्य स्वास्थ्य-रक्षाके साधन, २३८ कामधुक्कोटिकामदः—करोड़ों कामधेनुओंके समान मनोरथ पूर्ण करनेवाले ॥१५७॥

ब्रह्मविद्याकोटिरूपः शिपिविष्टः शुचिश्रवाः ।
विश्वम्भरस्तीर्थपादः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥१५८॥

२३९ ब्रह्मविद्याकोटिरूपः—करोड़ों ब्रह्मविद्याओंके तुल्य ज्ञानस्वरूप, २४० शिपिविष्टः—सूर्य-किरणोंमें स्थित रहनेवाले, २४१ शुचिश्रवाः—पवित्र यशवाले, २४२ विश्वम्भरः—सम्पूर्ण विश्वका भरण-पोषण करनेवाले, २४३ तीर्थपादः—तीर्थोंकी भाँति पवित्र चरणोंवाले, अथवा अपने चरणोंमें ही समस्त तीर्थोंको धारण करनेवाले, २४४ पुण्यश्रवणकीर्तनः—जिनके नाम, गुण, महिमा तथा स्वरूप आदिका श्रवण और कीर्तन परम पवित्र एवं पावन है—ऐसे भगवान् ॥१५८॥

आदिदेवो जगज्जैत्रो मुकुन्दः कालनेमिहा ।
वैकुण्ठोऽनन्तमाहात्म्यो महायोगेश्वरोत्सवः ॥१५९॥

२४५ आदिदेवः—आदि देवता, सबके आदि कारण एवं प्रकाशमान, २४६ जगज्जैत्रः—विश्वविजयी, २४७ मुकुन्दः—मोक्षदाता, २४८ कालनेमिहा—कालनेमि नामक दैत्यका वध करनेवाले, २४९ वैकुण्ठः—परमधामस्वरूप, २५० अनन्तमाहात्म्यः—जिनकी महिमाका अन्त नहीं है—ऐसे महामहिम परमेश्वर, २५१ महायोगेश्वरोत्सवः—बड़े-बड़े योगेश्वरोंके लिये जिनका दर्शन उत्सवरूप है—ऐसे भगवान् ॥१५९॥

नित्यतृप्तो लसद्भावो निःशङ्को नरकान्तकः ।
दीनानाथैकशरणं विश्वैकव्यसनापहः ॥१६०॥

२५२ नित्यतृप्तः—अपने आपमें ही सदा तृप्त रहनेवाले, २५३ लसद्भावः—सुन्दर स्वभाववाले, २५४ निःशङ्कः—अद्वितीय होनेके कारण भय-शङ्कासे रहित, २५५ नरकान्तकः—नरकके भयका नाश अथवा नरकासुरका वध करनेवाले, २५६ दीनानाथैकशरणम्—दीनों और अनाथोंको एकमात्र शरण देनेवाले, २५७ विश्वैकव्यसनापहः—संसारके एकमात्र संकट हरनेवाले ॥ १६० ॥

जगत्कृपाक्षमो नित्यं कृपालुः सज्जनाश्रयः ।
योगेश्वरः सदोदीर्णो वृद्धिक्षयविवर्जितः ॥१६१॥

२५८ जगत्कृपाक्षमः—सम्पूर्ण विश्वपर कृपा करनेमें समर्थ, २५९ नित्यं कृपालुः—सदा स्वभावसे ही कृपा करनेवाले, २६० सज्जनाश्रयः—सत्पुरुषोंके शरणदाता, २६१ योगेश्वरः—सम्पूर्ण योगों तथा उनसे प्राप्त होनेवाली सिद्धियोंके स्वामी, २६२ सदोदीर्णः—सदा अभ्युदयशील, नित्य उदार, सदा सबसे श्रेष्ठ, २६३ वृद्धिक्षयविवर्जितः—वृद्धि और ह्रासरूप विकारसे रहित ॥ १६१ ॥

अधोक्षजो विश्वरेताः प्रजापतिशताधिपः ।
शक्रब्रह्मार्चितपदः शम्भुब्रह्मोर्ध्वधामगः ॥१६२॥

२६४ अधोक्षजः—इन्द्रियोंके विषयोंसे ऊपर उठे हुए, अपने स्वरूपसे क्षीण न होनेवाले, २६५ विश्वरेताः—सम्पूर्ण विश्व जिनके वीर्यसे उत्पन्न हुआ है वे परमेश्वर, २६६ प्रजापतिशताधिपः—सैकड़ों प्रजापतियोंके स्वामी, २६७ शक्रब्रह्मार्चितपदः—इन्द्र और ब्रह्माजीके द्वारा पूजित चरणोंवाले, २६८ शम्भुब्रह्मोर्ध्वधामगः—भगवान् शङ्कर और ब्रह्माजीके धामसे भी ऊपर विराजमान वैकुण्ठधाममें निवास करनेवाले ॥ १६२ ॥

सूर्यसोमेक्षणो विश्वभोक्ता सर्वस्य पारगः ।
जगत्सेतुर्धर्मसेतुधरो विश्वधुरन्धरः ॥१६३॥

२६९ **सूर्यसोमेक्षणः**—सूर्य और चन्द्रमारूपी नेत्रवाले, २७० **विश्वभोक्ता**—विश्वका पालन करनेवाले, २७१ **सर्वस्य पारगः**—सबसे परे विराजमान, २७२ **जगत्सेतुः**—संसार-सागरसे पार होनेके लिये सेतुरूप, २७३ **धर्मसेतुधरः**—धर्ममर्यादाका पालन करनेवाले, २७४ **विश्वधुरन्धरः**—शेषनागके रूपसे समस्त विश्वका भार वहन करनेवाले ॥ १६३ ॥

निर्ममोऽखिललोकेशो निःसङ्गोऽद्भुतभोगवान् ।
वश्यमायो वश्यविश्वो विष्वक्सेनः सुरोत्तमः ॥१६४॥

२७५ **निर्ममः**—आसक्तिमूलक ममतासे रहित, २७६ **अखिललोकेशः**—सम्पूर्ण लोकोंका शासन करनेवाले, २७७ **निःसङ्गः**—आसक्तिरहित, २७८ **अद्भुतभोगवान्**—आश्चर्यजनक भोगसामग्रीसे सम्पन्न, २७९ **वश्यमायः**—मायाको अपने वशमें रखनेवाले, २८० **वश्यविश्वः**—समस्त जगत्को अपने अधीन रखनेवाले, २८१ **विष्वक्सेनः**—युद्धके लिये की हुई तैयारी मात्रसे ही दैत्यसेनाको तितर-बितर कर डालनेवाले, २८२ **सुरोत्तमः**—समस्त देवताओंमें श्रेष्ठ ॥ १६४ ॥

सर्वश्रेयःपतिर्दिव्योऽनर्घ्यभूषणभूषितः ।
सर्वलक्षणलक्षण्यः सर्वदैत्येन्द्रदर्पहा ॥१६५॥

२८३ **सर्वश्रेयःपतिः**—समस्त कल्याणोंके स्वामी, २८४ **दिव्यः**—लोकोत्तर सौन्दर्य-माधुर्य आदि गुणोंसे सम्पन्न, २८५ **अनर्घ्यभूषणभूषितः**—अमूल्य आभूषणोंसे विभूषित, २८६ **सर्वलक्षणलक्षण्यः**—समस्त शुभ लक्षणोंसे युक्त, २८७ **सर्वदैत्येन्द्रदर्पहा**—समस्त दैत्यपतियोंका दर्प दलन करनेवाले ॥१६५॥

समस्तदेवसर्वस्वं सर्वदैवतनायकः ।
समस्तदेवकवचं सर्वदेवशिरोमणिः ॥१६६॥

२८८ **समस्तदेवसर्वस्वम्**—सम्पूर्ण देवताओंके सर्वस्व, २८९ **सर्वदैवतनायकः**—समस्त देवताओंके नेता, २९० **समस्तदेवकवचम्**—सब देवताओंकी कवचके समान रक्षा करनेवाले, २९१ **सर्वदेवशिरोमणिः**—सम्पूर्ण देवताओंके शिरोमणि ॥ १६६ ॥

समस्तदेवतादुर्गः प्रपन्नाशनिपञ्जरः ।
समस्तभयहन्नामा भगवान् विष्टरश्रवाः ॥१६७॥

२९२ **समस्तदेवतादुर्गः**—मजबूत किलेके समान समस्त देवताओंकी रक्षा करनेवाले, २९३ **प्रपन्नाशनिपञ्जरः**—शरणागतोंकी रक्षाके लिये वज्रमय पिंजड़ेके समान, २९४ **समस्तभयहन्नामा**—जिनका नाम सब प्रकारके भयोंको दूर करनेवाला है—ऐसे विष्णु, २९५ **भगवान्**—पूर्ण ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्यसे सम्पन्न, २९६ **विष्टरश्रवाः**—कुशाकी मुष्टिके समान कानोंवाले १६७

विभुः सर्वहितोदर्को हतारिः स्वर्गतिप्रदः ।
सर्वदैवतजीवेशो ब्राह्मणादिनियोजकः ॥१६८॥

२९७ **विभुः**—सर्वत्र व्यापक, २९८—**सर्वहितोदर्कः**—सबके लिये हितकर भविष्यका निर्माण करनेवाले, २९९ **हतारिः**—जिनके शत्रु नष्ट हो चुके हैं, शत्रुहीन, ३०० **स्वर्गतिप्रदः**—स्वर्गीय—उच्चगति प्रदान करनेवाले, ३०१ **सर्वदैवतजीवेशः**—समस्त देवताओंके जीवनके स्वामी, ३०२ **ब्राह्मणादिनियोजकः**—ब्राह्मण आदि वर्णोंको अपने-अपने धर्ममें नियुक्त करनेवाले ॥१६८॥

ब्रह्मशम्भुपरार्धायुर्ब्रह्मज्येष्ठः शिशुस्वराट् ।
विराट् भक्तपराधीनः स्तुत्यः स्तोत्रार्थसाधकः ॥१६९॥

३०३ **ब्रह्मशम्भुपरार्धायुः**—ब्रह्मा और शिवकी अपेक्षा भी अनन्तगुनी आयुवाले, ३०४ **ब्रह्मज्येष्ठः**—ब्रह्माजीसे भी ज्येष्ठ, ३०५ **शिशुस्वराट्**—बालमुकुन्दरूपसे शोभा पानेवाले, ३०६ **विराट्**—विशेष शोभासम्पन्न, अखिल ब्रह्माण्डमय विराट् रूपधारी भगवान्, ३०७ **भक्तपराधीनः**—प्रेमविवश होकर भक्तोंके अधीन रहनेवाले, ३०८ **स्तुत्यः**—स्तुति करने योग्य, ३०९ **स्तोत्रार्थसाधकः**—स्तोत्रमें कहे हुए अर्थको सिद्ध करनेवाले ॥१६९॥

परार्थकर्ता कृत्यज्ञः स्वार्थकृत्यसदोज्झितः ।
सदानन्दः सदाभद्रः सदाशान्तः सदाशिवः ॥१७०॥

३१० **परार्थकर्ता**—परोपकार करनेवाले, ३११ **कृत्यज्ञः**—कर्तव्यका ज्ञान रखनेवाले, ३१२ **स्वार्थकृत्यसदोज्झितः**—स्वार्थसाधनके कार्योंसे सदा दूर रहनेवाले, ३१३ **सदानन्दः**—सदा आनन्दमग्न, सत्पुरुषोंको आनन्द प्रदान करनेवाले अथवा सत् एवं आनन्दस्वरूप, ३१४ **सदाभद्रः**—सर्वदा कल्याणरूप, ३१५ **सदाशान्तः**—नित्य शान्त, ३१६ **सदाशिवः**—निरन्तर कल्याण करनेवाले, ॥ १७० ॥

सदाप्रियः सदातुष्टः सदापुष्टः सदार्चितः ।
सदापूतः पावनाग्र्यो वेदगुह्यो वृषाकपिः ॥१७१॥

३१७ **सदाप्रियः**—सर्वदा सबके प्रियतम, ३१८ **सदातुष्टः**—निरन्तर संतुष्ट रहनेवाले, ३१९ **सदापुष्टः**—क्षुधा-पिपासा तथा आधि-व्याधिसे रहित होनेके कारण सदा पुष्ट शरीरवाले, ३२० **सदार्चितः**—भक्तोंद्वारा निरन्तर पूजित, ३२१ **सदापूतः**—नित्य पवित्र, ३२२ **पावनाग्र्यः**—पवित्र करनेवालोंमें अग्रगण्य, ३२३ **वेदगुह्यः**—वेदोंके गूढ़ रहस्य, ३२४ **वृषाकपिः**—वृष—धर्मको अकम्पित (अविचल) रखनेवाले श्रीविष्णु ॥ १७१ ॥

सहस्रनामा त्रियुगश्चतुर्मूर्तिश्चतुर्भुजः ।
भूतभव्यभवन्नाथो महापुरुषपूर्वजः ॥१७२॥

३२५ **सहस्रनामा**—हजारों नामवाले, ३२६ **त्रियुगः**—सत्ययुग, त्रेता और द्वापर नामक त्रियुग-स्वरूप, ३२७ **चतुर्मूर्तिः**—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न-रूप चार मूर्तियोंवाले, ३२८ **चतुर्भुजः**—चार भुजाओंवाले, ३२९ **भूतभव्यभवन्नाथः**—भूत, भविष्य और वर्तमान—सभी प्राणियोंके स्वामी, ३३० **महापुरुषपूर्वजः**—महापुरुष ब्रह्मा आदिके भी पूर्वज ॥ १७२ ॥

नारायणो मञ्जुकेशः सर्वयोगविनिःसृतः ।
वेदसारो यज्ञसारः सामसारस्तपोनिधिः ॥१७३॥

३३१ **नारायणः**—जलमें शयन करनेवाले, ३३२ **मञ्जुकेशः**—मनोहर घुँघराले केशोंवाले, ३३३ **सर्वयोगविनिःसृतः**—नाना प्रकारके शास्त्रोक्त साधनोंसे जाननेमें आनेवाले, समस्त योग-साधनोंसे प्रकट होनेवाले, ३३४ **वेदसारः**—वेदोंके सारभूत तत्त्व, ब्रह्म, ३३५ **यज्ञसारः**—यज्ञोंके सारतत्त्व—यज्ञपुरुष विष्णु, ३३६ **सामसारः**—सामवेदकी श्रुतियोंद्वारा गाये जानेवाले सारभूत परमात्मा, ३३७ **तपोनिधिः**—तपस्याके भंडार नर-नारायणस्वरूप ॥ १७३ ॥

साध्यश्रेष्ठः पुराणर्षिर्निष्ठा शान्तिः परायणम् ।
शिवस्त्रिशूलविध्वंसी श्रीकण्ठैकवरप्रदः ॥१७४॥

३३८ **साध्यश्रेष्ठः**—साध्य देवताओंमें श्रेष्ठ, साधनसे प्राप्त होनेवालोंमें सबसे श्रेष्ठ, ३३९ **पुराणर्षिः**—पुरातन ऋषि नारायण, ३४० **निष्ठा**—सबकी स्थितिके आधार—अधिष्ठानस्वरूप, ३४१ **शान्तिः**—परम शान्तिस्वरूप, ३४२ **परायणम्**—परम प्राप्यस्थान, ३४३ **शिवः**—कल्याणस्वरूप, ३४४ **त्रिशूलविध्वंसी**—आध्यात्मिक आदि त्रिविध शूलोंका नाश करनेवाले अथवा प्रलयकालमें महारुद्ररूप होकर त्रिशूलसे समस्त विश्वका विध्वंस करनेवाले, ३४५ **श्रीकण्ठैकवरप्रदः**—भगवान् शङ्करके एकमात्र वरदाता ॥ १७४ ॥

नरः कृष्णो हरिर्धर्मनन्दनो धर्मजीवनः ।
आदिकर्ता सर्वसत्यः सर्वस्त्रीरत्नदर्पहा ॥१७५॥

३४६ **नरः**—बदरिकाश्रममें तपस्या करनेवाले ऋषिश्रेष्ठ नर, नरके अवतार अर्जुन, ३४७ **कृष्णः**—भक्तोंके मनको आकृष्ट करनेवाले देवकीनन्दन श्रीकृष्ण, सच्चिदानन्दस्वरूप परमात्मा, ३४८ **हरिः**—गजेन्द्रकी पुकार सुनकर तत्काल प्रकट हो ग्राहके प्राणोंका अपहरण करनेवाले भगवान् श्रीहरि, ३४९ **धर्मनन्दनः**—धर्मके यहाँ पुत्ररूपसे अवतीर्ण होनेवाले भगवान् नारायण, अथवा धर्मराज युधिष्ठिरको आनन्दित करनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण, ३५० **धर्मजीवनः**—पापाचारी असुरोंका मूलोच्छेद करके धर्मको जीवित रखनेवाले, ३५१ **आदिकर्ता**—जगत्‌के आदि कारण ब्रह्माजीको उत्पन्न करनेवाले, ३५२ **सर्वसत्यः**—पूर्णतः सत्यस्वरूप, ३५३ **सर्वस्त्रीरत्नदर्पहा**—जितेन्द्रिय होनेके कारण सम्पूर्ण सुन्दरी स्त्रियोंका अभिमान चूर्ण करनेवाले ॥१७५॥

त्रिकालजितकन्दर्प उर्वशीसृङ्मुनीश्वरः ।
आद्यः कविर्हयग्रीवः सर्ववागीश्वरेश्वरः ॥१७६॥

३५४ **त्रिकालजितकन्दर्पः**—भूत, भविष्य और वर्तमान—तीनों कालोंमें कामदेवको परास्त करनेवाले, ३५५ **उर्वशीसृक्**—उर्वशी अप्सराकी सृष्टि करनेवाले भगवान् नारायण, ३५६ **मुनीश्वरः**—तपस्वी मुनियोंमें श्रेष्ठ नर-नारायणस्वरूप, ३५७ **आद्यः**—आदिपुरुष विष्णु, ३५८ **कविः**—त्रिकालदर्शी विद्वान्, ३५९ **हयग्रीवः**—हयग्रीव नामक अवतार धारण करनेवाले भगवान्, ३६० **सर्ववागीश्वरेश्वरः**—ब्रह्मा आदि समस्त वागीश्वरोंके भी ईश्वर ॥ १७६ ॥

सर्वदेवमयो ब्रह्मगुरुर्वागीश्वरीपतिः ।
अनन्तविद्याप्रभवो मूलाविद्याविनाशकः ॥१७७॥

३६१ **सर्वदेवमयः**—सम्पूर्ण देवस्वरूप, ३६२ **ब्रह्मगुरुः**—ब्रह्माजीको वेदका उपदेश करनेवाले गुरु, ३६३ **वागीश्वरीपतिः**—वाणीकी अधीश्वरी सरस्वती देवीके स्वामी, ३६४ **अनन्तविद्याप्रभवः**—असंख्य विद्याओंकी उत्पत्तिके हेतु, ३६५ **मूलाविद्याविनाशकः**—भव-बन्धनकी हेतुभूत मूल अविद्याका विनाश करनेवाले ॥ १७७ ॥

सार्वज्ञ्यदो नमज्जाड्यनाशको मधुसूदनः ।
अनेकमन्त्रकोटीशः शब्दब्रह्मैकपारगः ॥१७८॥

३६६ सार्वज्ञ्यदः—सर्वज्ञता प्रदान करनेवाले, ३६७ नमज्जाड्यनाशकः—प्रणाम करनेवाले भक्तोंकी जड़ताका नाश करनेवाले, ३६८ मधुसूदनः—मधु नामक दैत्यका वध करनेवाले, ३६९ अनेकमन्त्रकोटीशः—अनेक करोड़ मन्त्रोंके स्वामी, ३७० शब्दब्रह्मैकपारगः—शब्दब्रह्म (वेद-वेदाङ्गों) के एकमात्र पारङ्गत विद्वान् ॥ १७८ ॥

आदिविद्वान् वेदकर्ता वेदात्मा श्रुतिसागरः ।
ब्रह्मार्थवेदाहरणः सर्वविज्ञानजन्मभूः ॥१७९॥

३७१ आदिविद्वान्—सर्वप्रथम वेदका ज्ञान प्रकाशित करनेवाले, ३७२ वेदकर्ता—अपने निःश्वासके साथ वेदोंको प्रकट करनेवाले, ३७३ वेदात्मा—वेदोंके सार तत्त्व—उनके द्वारा प्रतिपादित होनेवाले सिद्धान्तभूत परमात्मा, ३७४ श्रुतिसागरः—वैदिक ज्ञानके समुद्र, ३७५ ब्रह्मार्थवेदाहरणः—मत्स्यरूप धारण करके ब्रह्माजीके लिये वेदोंको ले आनेवाले, ३७६ सर्वविज्ञानजन्मभूः—सब प्रकारके विज्ञानोंकी जन्मभूमि ॥ १७९ ॥

विद्याराजो ज्ञानमूर्तिर्ज्ञानसिन्धुरखण्डधीः ।
मत्स्यदेवो महाशृङ्गो जगद्बीजवहित्रधृक् ॥१८०॥

३७७ विद्याराजः—समस्त विद्याओंके राजा, ३७८ ज्ञानमूर्तिः—ज्ञानस्वरूप, ३७९ ज्ञानसिन्धुः—ज्ञानके सागर, ३८० अखण्डधीः—संशय-विपर्यय आदिके द्वारा कभी खण्डित न होनेवाली बुद्धिसे युक्त, ३८१ मत्स्यदेवः—मत्स्यावतारधारी भगवान्, ३८२ महाशृङ्गः—मत्स्य-शरीरमें ही महान् शृङ्ग धारण करनेवाले, ३८३ जगद्बीजवहित्रधृक्—संसारकी बीजभूत ओषधियोंके सहित नौकाको अपने सींगमें बाँधकर धारण करनेवाले मत्स्य-भगवान् ॥ १८० ॥

लीलाव्याप्ताखिलाम्भोधिर्ऋग्वेदादिप्रवर्तकः ।
आदिकूर्मोऽखिलाधारस्तृणीकृतजगद्भरः ॥१८१॥

३८४ लीलाव्याप्ताखिलाम्भोधिः—अपने मत्स्य-शरीरसे लीलापूर्वक सम्पूर्ण समुद्रको आच्छादित कर लेनेवाले, ३८५ ऋग्वेदादिप्रवर्तकः—ऋग्वेद, यजुर्वेद आदिके प्रवर्तक, ३८६ आदिकूर्मः—सर्वप्रथम कच्छपरूपमें प्रकट होनेवाले भगवान्, ३८७ अखिलाधारः—अखिल ब्रह्माण्डके आधारभूत, ३८८ तृणीकृतजगद्भरः—समस्त जगत्के भारको तिनकेके समान समझनेवाले ॥ १८१ ॥

अमरीकृतदेवौघः पीयूषोत्पत्तिकारणम् ।
आत्माधारो धराधारो यज्ञाङ्गो धरणीधरः ॥१८२॥

३८९ अमरीकृतदेवौघः—अमृत पिलाकर देव-समुदायको अमर बनानेवाले, ३९० पीयूषोत्पत्तिकारणम्—क्षीरसागरसे अमृतके निकालनेमें प्रधान कारण, ३९१ आत्माधारः—अन्य किसी आधारकी अपेक्षा न रखकर अपने ही आधारपर स्थित रहनेवाले, ३९२ धराधारः—पृथ्वीके आधार, ३९३ यज्ञाङ्गः—यज्ञमय शरीरवाले भगवान् वराह, ३९४ धरणीधरः—अपनी दाढ़ोंपर पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ १८२ ॥

हिरण्याक्षहरः पृथ्वीपतिः श्राद्धादिकल्पकः ।
समस्तपितृभीतिघ्नः समस्तपितृजीवनम् ॥१८३॥

३९५ हिरण्याक्षहरः—वराहरूपसे ही हिरण्याक्ष नामक दैत्यका वध करनेवाले, ३९६ पृथ्वीपतिः—उक्त अवतारमें ही पृथ्वीको पत्नीरूपमें ग्रहण करनेवाले, अथवा पृथ्वीके पालक, ३९७ श्राद्धादिकल्पकः—पितरोंके लिये श्राद्ध आदिकी व्यवस्था करनेवाले, ३९८ समस्तपितृभीतिघ्नः—सम्पूर्ण पितरोंके भयका निवारण करनेवाले, ३९९ समस्तपितृजीवनम्—समस्त पितरोंके जीवनाधार ॥ १८३ ॥

हव्यकव्यैकभुग्घव्यकव्यैकफलदायकः ।
रोमान्तर्लीनजलधिः क्षोभिताशेषसागरः ॥१८४॥

४०० हव्यकव्यैकभुक्—हव्य और कव्य (यज्ञ और श्राद्ध) के एकमात्र भोक्ता, ४०१ हव्यकव्यैकफलदायकः—यज्ञ और श्राद्धके एकमात्र फलदाता, ४०२ रोमान्तर्लीनजलधिः—अपने रोम-कूपोंमें समुद्रको लीन कर लेनेवाले महावराह, ४०३ क्षोभिताशेषसागरः—वराहरूपसे पृथ्वीकी खोज करते समय समस्त समुद्रको क्षुब्ध कर डालनेवाले ॥१८४॥

महावराहो यज्ञघ्नध्वंसको याज्ञिकाश्रयः ।
श्रीनृसिंहो दिव्यसिंहः सर्वानिष्टार्थदुःखहा ॥१८५॥

४०४ महावराहः—महान् वराहरूपधारी भगवान्, ४०५ यज्ञघ्नध्वंसकः—यज्ञमें विघ्न डालनेवाले असुरोंके विनाशक, ४०६ याज्ञिकाश्रयः—यज्ञ करनेवाले ऋत्विजोंके परम आश्रय, ४०७ श्रीनृसिंहः—अपने भक्त प्रह्लादकी बात सत्य करनेके लिये नृसिंहरूप धारण करनेवाले भगवान्, ४०८ दिव्यसिंहः—अलौकिक सिंहकी आकृति धारण करनेवाले, ४०९ सर्वानिष्टार्थदुःखहा—सब प्रकारकी अनिष्ट वस्तुओं और दुःखोंका नाश करनेवाले ॥१८५॥

एकवीरोऽद्भुतबलो यन्त्रमन्त्रैकभञ्जनः ।
ब्रह्मादिदुःसहज्योतिर्युगान्ताग्न्यतिभीषणः ॥१८६॥

४१० एकवीरः—अद्वितीय वीर, ४११ अद्भुतबलः—अद्भुत शक्तिशाली, ४१२ यन्त्रमन्त्रैकभञ्जनः—शत्रुके यन्त्र-मन्त्रोंको एकमात्र भंग करनेवाले, ४१३ ब्रह्मादिदुःसहज्योतिः—जिनके श्रीविग्रहकी ज्योति ब्रह्मा आदि देवताओंके लिये भी दुःसह है, ऐसे नृसिंह भगवान्, ४१४ युगान्ताग्न्यतिभीषणः—प्रलयकालीन अग्निके समान अत्यन्त भयङ्कर ॥१८६॥

कोटिवज्राधिकनखो जगद्दुष्प्रेक्ष्यमूर्तिधृक् ।
मातृचक्रप्रमथनो महामातृगणेश्वरः ॥१८७॥

४१५ कोटिवज्राधिकनखः—करोड़ों वज्रोंसे भी अधिक तीक्ष्ण नखोंवाले, ४१६ जगद्दुष्प्रेक्ष्यमूर्तिधृक्—सम्पूर्ण जगत् जिसको ओर कठिनतासे देख सके, ऐसी भयानक मूर्ति धारण करनेवाले, ४१७ मातृचक्रप्रमथनः—डाकिनी, शाकिनी, पूतना आदि मातृ-मण्डलको मथ डालनेवाले, ४१८ महामातृगणेश्वरः—अपनी शक्तिभूत दिव्य महामातृगणोंके अधीश्वर ॥१८७॥

अचिन्त्यामोघवीर्याढ्यः समस्तासुरघस्मरः ।
हिरण्यकशिपुच्छेदी कालः संकर्षणीपतिः ॥१८८॥

४१९ अचिन्त्यामोघवीर्याढ्यः—कभी व्यर्थ न जानेवाले अचिन्त्य पराक्रमसे सम्पन्न, ४२० समस्तासुरघस्मरः—समस्त असुरोंको ग्रास बनानेवाले, ४२१ हिरण्यकशिपुच्छेदी—हिरण्यकशिपु नामक दैत्यको विदीर्ण करनेवाले, ४२२ कालः—असुरोंके लिये कालरूप, ४२३ संकर्षणीपतिः—संहारकारिणी शक्तिके स्वामी ॥१८८॥

कृतान्तवाहनः सद्यःसमस्तभयनाशनः ।
सर्वविघ्नान्तकः सर्वसिद्धिदः सर्वपूरकः ॥१८९॥

४२४ कृतान्तवाहनः—कालको अपना वाहन बनानेवाले, ४२५ सद्यःसमस्तभयनाशनः—शरणमें आये हुए भक्तोंके समस्त भयोंका तत्काल नाश करनेवाले, ४२६ सर्वविघ्नान्तकः—सम्पूर्ण विघ्नोंका अन्त करनेवाले, ४२७ सर्वसिद्धिदः—सब प्रकारकी सिद्धि प्रदान करनेवाले, ४२८ सर्वपूरकः—सम्पूर्ण मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले ॥१८९॥

समस्तपातकध्वंसी सिद्धिमन्त्राधिकाह्वयः ।
भैरवेशो हरार्तिघ्नः कालकोटिदुरासदः ॥१९०॥

४२९ समस्तपातकध्वंसी—सब पातकोंका नाश करनेवाले, ४३० सिद्धिमन्त्राधिकाह्वयः—नाममें ही सिद्धि और मन्त्रोंसे अधिक शक्ति रखनेवाले, ४३१ भैरवेशः—भैरवगणोंके स्वामी, ४३२ हरार्तिघ्नः—भगवान् शङ्करकी पीड़ाका नाश करनेवाले, ४३३ कालकोटिदुरासदः—करोड़ों कालोंके लिये भी दुर्धर्ष ॥१९०॥

दैत्यगर्भस्राविनामा स्फुटद्ब्रह्माण्डगर्जितः ।
स्मृतमात्राखिलत्राताद्भुतरूपो महाहरिः ॥१९१॥

४३४ दैत्यगर्भस्राविनामा—जिनका नाम सुनकर ही दैत्यपत्नियोंके गर्भ गिर जाते हैं—ऐसे भगवान् नृसिंह, ४३५ स्फुटद्ब्रह्माण्डगर्जितः—जिनके गर्जनेपर सारा ब्रह्माण्ड फटने लगता है, ४३६ स्मृतमात्राखिलत्राता—स्मरण करनेमात्रसे सम्पूर्ण जगत्‌की रक्षा करनेवाले, ४३७ अद्भुतरूपः—आश्चर्यजनक रूप धारण करनेवाले, ४३८ महाहरिः—महान् सिंहकी आकृति धारण करनेवाले॥१९१॥

ब्रह्मचर्यशिरःपिण्डी दिक्पालोऽर्धाङ्गभूषणः ।
द्वादशार्कशिरोदामा रुद्रशीर्षैकनूपुरः ॥१९२॥

४३९ ब्रह्मचर्यशिरःपिण्डी—अपने शिरोभागमें ब्रह्मचर्यको धारण करनेवाले, ४४० दिक्पालः—समस्त दिशाओंका पालन करनेवाले, ४४१ अर्द्धाङ्गभूषणः—आधे अङ्गमें आभूषण धारण करनेवाले नृसिंह, ४४२ द्वादशार्कशिरोदामा—मस्तकमें बारह सूर्योंके समान तेज धारण करनेवाले,४४३ रुद्रशीर्षैकनूपुरः—जिनके चरणोंमें प्रणाम करते समय रुद्रका मस्तक एक नूपुरकी भाँति शोभा धारण करता है, वे भगवान् ॥१९२॥

योगिनीग्रस्तगिरिजात्राता भैरवतर्जकः ।
वीरचक्रेश्वरोऽत्युग्रो यमारिः कालसंवरः ॥१९३॥

४४४ योगिनीग्रस्तगिरिजात्राता—योगिनियोंके चंगुलमें फँसी हुई पार्वतीकी रक्षा करनेवाले, ४४५ भैरवतर्जकः—भैरवगणोंको डाँट बतानेवाले, ४४६ वीरचक्रेश्वरः—वीरमण्डलके ईश्वर, ४४७ अत्युग्रः—अत्यन्त भयङ्कर, ४४८ यमारिः—यमराजके शत्रु, ४४९ कालसंवरः—कालको आच्छादित करनेवाले ॥१९३॥

क्रोधेश्वरो रुद्रचण्डीपरिवारादिदुष्टभुक् ।
सर्वाक्षोभ्यो मृत्युमृत्युः कालमृत्युनिवर्तकः ॥१९४॥

४५० क्रोधेश्वरः—क्रोधपर शासन करनेवाले, ४५१ रुद्रचण्डीपरिवारादिदुष्टभुक्—रुद्र और चण्डीके पार्षदोंमें रहनेवाले दुष्टोंके भक्षक, ४५२ सर्वाक्षोभ्यः—किसीके द्वारा भी विचलित नहीं किये जा सकनेवाले, ४५३ मृत्युमृत्युः—मौतको भी मारनेवाले, ४५४ कालमृत्यु-

निवर्तकः—काल और मृत्युका निवारण करनेवाले ॥१९४॥

असाध्यसर्वरोगघ्नः सर्वदुर्ग्रहसौम्यकृत् ।
गणेशकोटिदर्पघ्नो दुःसहाशेषगोत्रहा ॥१९५॥

४५५ असाध्यसर्वरोगघ्नः—सम्पूर्ण असाध्य रोगोंका नाश करनेवाले, ४५६ सर्वदुर्ग्रहसौम्यकृत्—समस्त दुष्ट ग्रहोंको शान्त करनेवाले, ४५७ गणेशकोटिदर्पघ्नः—करोड़ों गणपतियोंका अभिमान चूर्ण करनेवाले, ४५८ दुस्सहाशेषगोत्रहा—समस्त दुस्सह शत्रुओंके कुलका नाश करनेवाले ॥१९५॥

देवदानवदुर्दर्शो जगद्भयदभीषकः ।
समस्तदुर्गतित्राता जगद्भक्षकभक्षकः ॥१९६॥

४५९ देवदानवदुर्दर्शः—देवता और दानवोंको भी जिनकी ओर देखनेमें कठिनाई होती है—ऐसे भगवान् नृसिंह, ४६० जगद्भयदभीषकः—संसारके भयदाता असुरोंको भी भयभीत करनेवाले, ४६१ समस्तदुर्गतित्राता—सम्पूर्ण दुर्गतियोंसे उद्धार करनेवाले, ४६२ जगद्भक्षकभक्षकः—जगत्का भक्षण करनेवाले कालके भी भक्षक १९६

उग्रेशोऽम्बरमार्जारः कालमूषकभक्षकः ।
अनन्तायुधदोर्दण्डी नृसिंहो वीरभद्रजित् ॥१९७॥

४६३ उग्रेशः—उग्र शक्तियोंपर शासन करनेवाले, ४६४ अम्बरमार्जारः—आकाशरूपी बिलाव, ४६५ कालमूषकभक्षकः—कालरूपी चूहेको खा जानेवाले, ४६६ अनन्तायुधदोर्दण्डी—अपने बाहुदण्डोंको ही अक्षय आयुधोंके रूपमें धारण करनेवाले, ४६७ नृसिंहः—नर तथा सिंह दोनोंकी आकृति धारण करनेवाले, ४६८ वीरभद्रजित्—वीरभद्रपर विजय पानेवाले ॥१९७॥

योगिनीचक्रगुह्येशः शक्रारिपशुमांसभुक् ।
रुद्रो नारायणो मेषरूपशङ्करवाहनः ॥१९८॥

४६९ योगिनीचक्रगुह्येशः—योगिनी-मण्डलके रहस्योंके स्वामी, ४७० शक्रारिपशुमांसभुक्—इन्द्रके शत्रुभूत दैत्यरूपी पशुओंका भक्षण करनेवाले, ४७१ रुद्रः—प्रलयकालमें सबको रुलानेवाले रुद्र अथवा भयङ्कर आकारवाले नृसिंह, ४७२ नारायणः—नार अर्थात् जीवसमुदायके आश्रय; अथवा नार—जलको निवासस्थान बनाकर रहनेवाले शेषशायी, ४७३ मेषरूपशङ्करवाहनः—मेषरूपधारी शिवको वाहन बनानेवाले ॥१९८॥

मेषरूपशिवत्राता दुष्टशक्तिसहस्रभुक् ।
तुलसीवल्लभो वीरो वामाचाराखिलेष्टदः ॥१९९॥

४७४ मेषरूपशिवत्राता—मेषरूपधारी शिवके रक्षक, ४७५ दुष्टशक्तिसहस्रभुक्—सहस्रों दुष्टशक्तियोंका विनाश करनेवाले, ४७६ तुलसीवल्लभः—तुलसीके प्रेमी, ४७७ वीरः—शूरवीर, ४७८ वामाचाराखिलेष्टदः—सुन्दर आचरणवालोंका सम्पूर्ण अभीष्ट सिद्ध करनेवाले ॥१९९॥

महाशिवः शिवारूढो भैरवैककपालधृक् ।
झिल्लिचक्रेश्वरः शक्रदिव्यमोहनरूपदः ॥२००॥

४७९ महाशिवः—परम मङ्गलमय, ४८० शिवारूढः—कल्याणमय वाहनपर आरूढ़ होनेवाले, अथवा ध्यानस्थ भगवान् शिवके हृदयकमलपर आसीन होनेवाले, ४८१ भैरवैककपालधृक्—रुद्ररूपसे हाथमें एक भयानक कपाल धारण करनेवाले, ४८२ झिल्लिचक्रेश्वरः—झींगुरोंके समुदायके स्वामी, ४८३ शक्रदिव्यमोहनरूपदः—इन्द्रको दिव्य एवं मोहक रूप देनेवाले ॥२००॥

गौरीसौभाग्यदो मायानिधिर्मायाभयापहः ।
ब्रह्मतेजोमयो ब्रह्मश्रीमयश्च त्रयीमयः ॥२०१॥

४८४ गौरीसौभाग्यदः—भगवती पार्वतीको सौभाग्य प्रदान करनेवाले, ४८५ मायानिधिः—मायाके भंडार, ४८६ मायाभयापहः—मायाजनित भयका नाश करनेवाले, ४८७ ब्रह्मतेजोमयः—ब्रह्मतेजसे सम्पन्न भगवान् वामन, ४८८ ब्रह्मश्रीमयः—ब्राह्मणोचित श्रीसे परिपूर्ण विग्रहवाले, ४८९ त्रयीमयः—ऋक्, यजुः और साम—इन तीन वेदोंद्वारा प्रतिपादित स्वरूपवाले ॥२०१॥

सुब्रह्मण्यो बलिध्वंसी वामनोऽदितिदुःखहा ।
उपेन्द्रो नृपतिर्विष्णुः कश्यपान्वयमण्डनः ॥२०२॥

४९० सुब्रह्मण्यः—ब्राह्मण, वेद, तप और ज्ञानकी भलीभाँति रक्षा करनेवाले, ४९१ बलिध्वंसी—राजा बलिको स्वर्गसे हटानेवाले, ४९२ वामनः—वामनरूपधारी भगवान्, ४९३ अदितिदुःखहा—देवमाता अदितिके दुःख दूर करनेवाले, ४९४ उपेन्द्रः—इन्द्रके छोटे भाई, द्वितीय इन्द्र, ४९५ नृपतिः—राजा, जो 'नराणां च नराधिपः' के अनुसार भगवान्‌की दिव्य विभूति है, ४९६ विष्णुः—बारह आदित्योंमेंसे एक, ४९७ कश्यपान्वयमण्डनः—कश्यपजीके कुलकी शोभा बढ़ानेवाले ॥२०२॥

बलिस्वाराज्यदः सर्वदेवविप्रान्नदोऽच्युतः ।
उरुक्रमस्तीर्थपादस्त्रिपदस्थस्त्रिविक्रमः ॥२०३॥

४९८ बलिस्वाराज्यदः—राजा बलिको [अगले मन्वन्तरमें इन्द्र बनाकर] स्वर्गका राज्य प्रदान करनेवाले,

४९९ **सर्वदेवविप्रान्नदः**—सम्पूर्ण देवताओं तथा ब्राह्मणोंको अन्न देनेवाले, ५०० **अच्युतः**—अपनी महिमासे कभी च्युत न होनेवाले, ५०१ **उरुक्रमः**—बलिके यज्ञमें विराट्‌रूप होकर लंबे डगसे त्रिलोकीको नापनेवाले, ५०२ **तीर्थपादः**—गङ्गाजीको प्रकट करनेके कारण तीर्थरूप चरणोंवाले, ५०३ **त्रिपदस्थः**—तीन स्थानोंपर पैर रखनेवाले, ५०४ **त्रिविक्रमः**—तीन बड़े-बड़े डगवाले ॥२०३॥

व्योमपादः स्वपादाम्भःपवित्रितजगत्त्रयः ।
ब्रह्मेशाद्यभिवन्द्याङ्घ्रिर्द्रुतधर्माहिधावनः ॥२०४॥

५०५ **व्योमपादः**—सम्पूर्ण आकाशको चरणोंसे नापनेवाले, ५०६ **स्वपादाम्भःपवित्रितजगत्त्रयः**—अपने चरणोंके जल (गङ्गाजी) से तीनों लोकोंको पवित्र करनेवाले, ५०७ **ब्रह्मेशाद्यभिवन्द्याङ्घ्रिः**—ब्रह्मा और शङ्कर आदि देवताओंके द्वारा वन्दनीय चरणोंवाले, ५०८ **द्रुतधर्मा**—शीघ्रतापूर्वक धर्मका पालन करनेवाले, ५०९ **अहिधावनः**—सर्पकी भाँति तेज दौड़नेवाले ॥२०४॥

अचिन्त्याद्भुतविस्तारो विश्ववृक्षो महाबलः ।
राहुमूर्धापराङ्गच्छिद् भृगुपत्नीशिरोहरः ॥२०५॥

५१० **अचिन्त्याद्भुतविस्तारः**—किसी तरह चिन्तनमें न आनेवाले अद्भुत विस्तारसे युक्त, ५११ **विश्ववृक्षः**—संसार-वृक्षरूप, ५१२ **महाबलः**—महान् बलसे युक्त, ५१३ **राहुमूर्धापराङ्गच्छित्**—राहुके मस्तक और धड़को काटकर अलग करनेवाले, ५१४ **भृगुपत्नीशिरोहरः**—भृगुपत्नीके मस्तकका अपहरण करनेवाले ॥२०५॥

पापात्त्रस्तः सदापुण्यो दैत्याशानित्यखण्डकः ।
पूरिताखिलदेवाशो विश्वार्थैकावतारकृत् ॥२०६॥

५१५ **पापात्त्रस्तः**—पापसे डरनेवाले, ५१६ **सदापुण्यः**—निरन्तर पुण्यमें प्रवृत्त, ५१७ **दैत्याशानित्यखण्डकः**—धर्मविरोधी दैत्योंकी आशाका सदा खण्डन करनेवाले, ५१८ **पूरिताखिलदेवाशः**—सम्पूर्ण देवताओंकी आशा पूर्ण करनेवाले, ५१९ **विश्वार्थैकावतारकृत्**—एकमात्र विश्वका कल्याण करनेके लिये अवतार लेनेवाले २०६

स्वमायानित्यगुप्तात्मा भक्तचिन्तामणिः सदा ।
वरदः कार्तवीर्यादिराजराज्यप्रदोऽनघः ॥२०७॥

५२० **स्वमायानित्यगुप्तात्मा**—अपनी मायासे निरन्तर अपने स्वरूपको छिपाये रखनेवाले, ५२१ **सदा भक्तचिन्तामणिः**—सदा भक्तोंका मनोरथ पूर्ण करनेके लिये चिन्तामणिके समान, ५२२ **वरदः**—भक्तोंको वर प्रदान करनेवाले, ५२३ **कार्तवीर्यादिराजराज्यप्रदः**—कृतवीर्य-पुत्र अर्जुन आदि राजाओंको राज्य देनेवाले, ५२४ **अनघः**—स्वभावतः पापसे रहित ॥२०७॥

विश्वश्लाघ्योऽमिताचारो दत्तात्रेयो मुनीश्वरः ।
पराशक्तिसदाश्लिष्टो योगानन्दसदोन्मदः ॥२०८॥

५२५—**विश्वश्लाघ्यः**—समस्त संसारके लिये प्रशंसनीय, ५२६ **अमिताचारः**—अपरिमित आचारवाले, ५२७ **दत्तात्रेयः**—अत्रिकुमार दत्त, जो भगवान्‌के अवतार हैं, ५२८ **मुनीश्वरः**—मुनियोंके स्वामी, ५२९ **पराशक्तिसदाश्लिष्टः**—सदा पराशक्तिसे युक्त, ५३० **योगानन्दसदोन्मदः**—निरन्तर योगजनित आनन्दमें विभोर रहनेवाले ॥२०८॥

समस्तेन्द्रारितेजोहृत्परमामृतपद्मपः ।
अनसूयागर्भरत्नं भोगमोक्षसुखप्रदः ॥२०९॥

५३१ **समस्तेन्द्रारितेजोहृत्**—इन्द्रसे शत्रुता रखनेवाले सम्पूर्ण दैत्योंका तेज हर लेनेवाले, ५३२ **परमामृतपद्मपः**—परम अमृतमय कमलका रस पान करनेवाले, ५३३ **अनसूयागर्भरत्नम्**—अत्रिपत्नी अनसूयाजीके गर्भके रत्न, ५३४ **भोगमोक्षसुखप्रदः**—भोग और मोक्षका सुख प्रदान करनेवाले ॥२०९॥

जमदग्निकुलादित्यो रेणुकाद्भुतशक्तिधृक् ।
मातृहत्यादिनिर्लेपः स्कन्दजिद्विप्रराज्यदः ॥२१०॥

५३५ **जमदग्निकुलादित्यः**—मुनिवर जमदग्निके वंशको सूर्यके समान प्रकाशित करनेवाले परशुरामजी, ५३६ **रेणुकाद्भुतशक्तिधृक्**—माता रेणुकाकी अद्भुत शक्ति धारण करनेवाले, ५३७ **मातृहत्यादिनिर्लेपः**—मातृहत्या आदि दोषोंसे निर्लिप्त रहनेवाले परशुरामजी, ५३८ **स्कन्दजित्**—कार्त्तिकेयजीको जीतनेवाले, ५३९ **विप्रराज्यदः**—ब्राह्मणोंको राज्य देनेवाले ॥२१०॥

सर्वक्षत्रान्तकृद्वीरदर्पहा कार्तवीर्यजित् ।
सप्तद्वीपवतीदाता शिवार्चकयशःप्रदः ॥२११॥

५४० **सर्वक्षत्रान्तकृत्**—समस्त क्षत्रियोंका अन्त करनेवाले, ५४१ **वीरदर्पहा**—बड़े-बड़े वीरोंका दर्प दलन करनेवाले, ५४२ **कार्तवीर्यजित्**—कृतवीर्यपुत्र अर्जुनको परास्त करनेवाले, ५४३ **सप्तद्वीपवतीदाता**—ब्राह्मणोंको सातों द्वीपोंसे युक्त पृथ्वीका दान करनेवाले, ५४४ **शिवार्चकयशःप्रदः**—शिवकी पूजा करनेवालेको यश देनेवाले ॥२११॥

भीमः परशुरामश्च शिवाचार्यैकविश्वभूः ।
शिवाखिलज्ञानकोशो भीष्माचार्योऽग्निदैवतः ॥२१२॥

५४५ **भीमः**—भयङ्कर पराक्रम करनेवाले, ५४६ **परशुरामः**—परशुरामरूपधारी भगवान्, ५४७ **शिवाचार्यैकविश्वभूः**— भगवान् शङ्करको गुरु बनाकर विद्या सीखनेवाले संसारमें एकमात्र पुरुष, ५४८ **शिवाखिलज्ञानकोशः**—भगवान् शङ्करसे सम्पूर्ण ज्ञानका कोष प्राप्त करनेवाले, ५४९ **भीष्माचार्यः**—पाण्डवोंके पितामह भीष्मजीके आचार्य, ५५० **अग्निदैवतः**—अग्निदेवताके उपासक ॥२१२॥

द्रोणाचार्यगुरुर्विश्वजैत्रधन्वा कृतान्तजित् ।
अद्वितीयतपोमूर्तिर्ब्रह्मचर्यैकदक्षिणः ॥२१३॥

५५१ **द्रोणाचार्यगुरुः**—आचार्य द्रोणके गुरु, ५५२ **विश्वजैत्रधन्वा**—विश्वविजयी धनुष धारण करनेवाले, ५५३ **कृतान्तजित्**—कालको भी परास्त करनेवाले, ५५४ **अद्वितीयतपोमूर्तिः**—अद्वितीय तपस्याके मूर्तिमान् स्वरूप, ५५५ **ब्रह्मचर्यैकदक्षिणः**—ब्रह्मचर्यपालनमें एकमात्र दक्ष ॥२१३॥

मनुश्रेष्ठः सतां सेतुर्महीयान् वृषभो विराट् ।
आदिराजः क्षितिपिता सर्वरत्नैकदोहकृत् ॥२१४॥

५५६ **मनुश्रेष्ठः**—मनुष्योंमें श्रेष्ठ राजा पृथु, ५५७ **सतां सेतुः**—सेतुके समान सत्पुरुषोंकी मर्यादाके रक्षक, अथवा सत्पुरुषोंके लिये सेतुरूप, ५५८ **महीयान्**—बड़ोंसे भी बड़े महापुरुष, ५५९ **वृषभः**—कामनाओंकी वर्षा करनेवाले श्रेष्ठ राजा, ५६० **विराट्**—तेजस्वी राजा, ५६१ **आदिराजः**—मनुष्योंमें सबसे प्रथम राजाके पदसे विभूषित, ५६२ **क्षितिपिता**—पृथ्वीको अपनी कन्याके रूपमें स्वीकार करनेवाले, ५६३ **सर्वरत्नैकदोहकृत्**—गोरूपधारिणी पृथ्वीसे समस्त रत्नोंके एकमात्र दुहनेवाले ॥२१४॥

पृथुर्जन्माद्येकदक्षो गीःश्रीकीर्तिस्वयंवृतः ।
जगद्वृत्तिप्रदश्चक्रवर्तिश्रेष्ठोऽद्वयास्त्रधृक् ॥२१५॥

५६४ **पृथुः**—अपने यशसे प्रख्यात पृथु नामक राजा, ५६५ **जन्माद्येकदक्षः**—उत्पत्ति, पालन और संहारमें एकमात्र कुशल, ५६६ **गीःश्रीकीर्तिस्वयंवृतः**—वाणी, लक्ष्मी और कीर्तिके द्वारा स्वयं वरण किये हुए, ५६७ **जगद्वृत्तिप्रदः**—संसारको जीविका प्रदान करनेवाले, ५६८ **चक्रवर्तिश्रेष्ठः**—चक्रवर्ती राजाओंमें श्रेष्ठ, ५६९ **अद्वयास्त्रधृक्**—अद्वितीय शस्त्रधारी वीर ॥२१५॥

सनकादिमुनिप्राप्यभगवद्भक्तिवर्धनः ।
वर्णाश्रमादिधर्माणां कर्ता वक्ता प्रवर्तकः ॥२१६॥

५७० **सनकादिमुनिप्राप्यभगवद्भक्तिवर्धनः**—सनकादि मुनियोंसे प्राप्त होने योग्य भगवद्भक्तिका विस्तार करनेवाले, ५७१ **वर्णाश्रमादिधर्माणां कर्त्ता**— वर्ण और आश्रम आदिके धर्मोंके बनानेवाले, ५७२...... **वक्ता**—वर्ण और आश्रम आदिके धर्मोंका उपदेश करनेवाले, ५७३...... **प्रवर्तकः**—उक्त धर्मोंका प्रचार करनेवाले ॥२१६॥

सूर्यवंशध्वजो रामो राघवः सद्गुणार्णवः ।
काकुत्स्थो वीरराजार्यो राजधर्मधुरन्धरः ॥२१७॥

५७४ **सूर्यवंशध्वजः**—सूर्यवंशकी कीर्ति-पताका फहरानेवाले श्रीरघुनाथजी, ५७५ **रामः**—योगीजनोंके रमण करनेके लिये नित्यानन्दस्वरूप परमात्मा, मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजी, ५७६ **राघवः**—रघुकुलमें जन्म ग्रहण करनेवाले, ५७७ **सद्गुणार्णवः**—उत्तम गुणोंके सागर, ५७८ **काकुत्स्थः**—ककुत्स्थ-पदवी धारण करनेवाले राजा पुरञ्जयकी कुल-परम्परामें अवतीर्ण, ५७९ **वीरराजार्यः**—वीर राजाओंमें श्रेष्ठ, ५८० **राजधर्मधुरन्धरः**—राजधर्मका भार वहन करनेवाले ॥२१७॥

नित्यस्वस्थाश्रयः सर्वभद्रग्राही शुभैकदृक् ।
नररत्नं रत्नगर्भो धर्माध्यक्षो महानिधिः ॥२१८॥

५८१ **नित्यस्वस्थाश्रयः**—सदा अपने स्वरूपमें स्थित रहनेवाले महात्माओंके आश्रय, ५८२ **सर्वभद्रग्राही**—समस्त कल्याणोंकी प्राप्ति करानेवाले, ५८३ **शुभैकदृक्**—एकमात्र शुभकी ओर ही दृष्टि रखनेवाले, ५८४ **नररत्नम्**—मनुष्योंमें श्रेष्ठ, ५८५ **रत्नगर्भः**—अपनी माताके गर्भके रत्न अथवा अपने भीतर रत्नमय गुणोंको धारण करनेवाले, ५८६ **धर्माध्यक्षः**—धर्मके साक्षी, ५८७ **महानिधिः**—अखिल भूमण्डलके सम्राट् होनेके कारण बहुत बड़े कोषवाले ॥२१८॥

सर्वश्रेष्ठाश्रयः सर्वशस्त्रास्त्रग्रामवीर्यवान् ।
जगदीशो दाशरथिः सर्वरत्नाश्रयो नृपः ॥२१९॥

५८८ **सर्वश्रेष्ठाश्रयः**—सबसे श्रेष्ठ आश्रय, ५८९ **सर्वशस्त्रास्त्रग्रामवीर्यवान्**—समस्त अस्त्र-शस्त्रोंके समुदायकी शक्ति रखनेवाले, ५९० **जगदीशः**—सम्पूर्ण जगत्के स्वामी, ५९१ **दाशरथिः**—अयोध्याके चक्रवर्ती नरेश महाराज दशरथके प्राणाधिक प्रियतम पुत्र, ५९२ **सर्वरत्नाश्रयो नृपः**—सम्पूर्ण रत्नोंके आश्रयभूत राजा ॥२१९॥

समस्तधर्मसूः सर्वधर्मद्रष्टाखिलार्तिहा ।
अतीन्द्रो ज्ञानविज्ञानपारदृश्वा क्षमाम्बुधिः ॥२२०॥

५९३ **समस्तधर्मसूः**—समस्त धर्मोंको उत्पन्न करनेवाले, ५९४ **सर्वधर्मद्रष्टा**—सम्पूर्ण धर्मोंपर दृष्टि रखनेवाले, ५९५ **अखिलार्तिहा**—सबकी पीड़ा दूर करनेवाले अथवा समस्त पीड़ाओंके नाशक, ५९६ **अतीन्द्रः**—इन्द्रसे भी बढ़कर ऐश्वर्यशाली, ५९७ **ज्ञानविज्ञानपारद्रष्टा**—ज्ञान और विज्ञानके पारंगत, ५९८ **क्षमाम्बुधिः**—क्षमाके सागर ॥२२०॥

सर्वप्रकृष्टः शिष्टेष्टो हर्षशोकाद्यनाकुलः ।
पित्राज्ञात्यक्तसाम्राज्यः सपत्नोदयनिर्भयः ॥२२१॥

५९९ **सर्वप्रकृष्टः**—सबसे श्रेष्ठ, ६०० **शिष्टेष्टः**—शिष्ट पुरुषोंके इष्टदेव, ६०१ **हर्षशोकाद्यनाकुलः**—हर्ष और शोक आदिसे विचलित न होनेवाले, ६०२ **पित्राज्ञात्यक्तसाम्राज्यः**—पिताकी आज्ञासे समस्त भूमण्डलका साम्राज्य त्याग देनेवाले, ६०३ **सपत्नोदयनिर्भयः**—शत्रुओंके उदयसे भयभीत न होनेवाले ॥२२१॥

गुहादेशार्पितैश्वर्यः शिवस्पर्धाजटाधरः ।
चित्रकूटाप्तरत्नाद्रिर्जगदीशो वनेचरः ॥२२२॥

६०४ **गुहादेशार्पितैश्वर्यः**—वनवासके समय पर्वतकी कन्दराओंको ऐश्वर्य समर्पित करनेवाले—अपने निवाससे गुफाओंको भी ऐश्वर्य-सम्पन्न बनानेवाले, ६०५ **शिवस्पर्धाजटाधरः**—शङ्करजीकी जटाओंसे होड़ लगानेवाली जटाएँ धारण करनेवाले, ६०६ **चित्रकूटाप्तरत्नाद्रिः**—चित्रकूटको निवास-स्थल बनाकर उसे रत्नमय पर्वत (मेरुगिरि) की महत्ता प्राप्त करानेवाले, ६०७ **जगदीशः**—सम्पूर्ण जगत्के ईश्वर, ६०८ **वनेचरः**—वनमें विचरनेवाले ॥२२२॥

यथेष्टामोघसर्वास्त्रो देवेन्द्रतनयाक्षिहा ।
ब्रह्मेन्द्रादिनतैषीको मारीचघ्नो विराधहा ॥२२३॥

६०९ **यथेष्टामोघसर्वास्त्रः**—जिनके सभी अस्त्र इच्छानुसार चलनेवाले एवं अचूक हैं, ६१० **देवेन्द्रतनयाक्षिहा**—देवराजके पुत्र जयन्तकी आँख फोड़नेवाले, ६११ **ब्रह्मेन्द्रादिनतैषीकः**—जिनके चलाये हुए सींकके बाणको ब्रह्मा आदि देवताओंने भी मस्तक झुकाया था, ऐसे प्रभावशाली भगवान् श्रीराम, ६१२ **मारीचघ्नः**—मायामय मृगका रूप धारण करनेवाले मारीच नामक राक्षसके नाशक, ६१३ **विराधहा**—विराधका वध करनेवाले ॥२२३॥

ब्रह्मशापहताशेषदण्डकारण्यपावनः ।
चतुर्दशसहस्रोग्ररक्षोघ्नैकशरैकधृक् ॥२२४॥

६१४ **ब्रह्मशापहताशेषदण्डकारण्यपावनः**—ब्राह्मण (शुक्राचार्य) के शापसे नष्ट हुए दण्डकारण्यको अपने निवाससे पुनः पावन बनानेवाले, ६१५ **चतुर्दशसहस्रोग्ररक्षोघ्नैकशरैकधृक्**—चौदह हजार भयङ्कर राक्षसोंको मारनेकी शक्तिसे युक्त एकमात्र बाण धारण करनेवाले ॥२२४॥

खरारिस्त्रिशिरोहन्ता दूषणघ्नो जनार्दनः ।
जटायुषोऽग्निगतिदोऽगस्त्यसर्वस्वमन्त्रराट् ॥२२५॥

६१६ **खरारिः**—खर नामक राक्षसके शत्रु, ६१७ **त्रिशिरोहन्ता**—त्रिशिराका वध करनेवाले, ६१८ **दूषणघ्नः**—दूषण नामक राक्षसके प्राण लेनेवाले, ६१९ **जनार्दनः**—भक्तलोग जिनसे अभ्युदय एवं निःश्रेयसरूप परम पुरुषार्थकी याचना करते हैं, ६२० **जटायुषोऽग्निगतिदः**—जटायुका दाह-संस्कार करके उन्हें उत्तम गति प्रदान करनेवाले, ६२१ **अगस्त्यसर्वस्वमन्त्रराट्**—जिनका नाम महर्षि अगस्त्यका सर्वस्व एवं मन्त्रोंका राजा है ॥२२५॥

लीलाधनुष्कोट्यपास्तदुन्दुभ्यस्थिमहाचलः ।
सप्ततालव्यधाकृष्टध्वस्तपातालदानवः ॥२२६॥

६२२ **लीलाधनुष्कोट्यपास्तदुन्दुभ्यस्थिमहाचलः**—खेल-खेलमें ही दुन्दुभि नामक दानवकी हड्डियोंके महान् पर्वतको धनुषकी नोकसे उठाकर दूर फेंक देनेवाले, ६२३ **सप्ततालव्यधाकृष्टध्वस्तपातालदानवः**—सात तालवृक्षोंके वेधसे आकृष्ट होकर आये हुए पातालवासी दानवका विनाश करनेवाले ॥२२६॥

सुग्रीवराज्यदोऽहीनमनसैवाभयप्रदः ।
हनुमद्रुद्रमुख्येशः समस्तकपिदेहभृत् ॥२२७॥

६२४ **सुग्रीवराज्यदः**—सुग्रीवको राज्य देनेवाले, ६२५ **अहीनमनसैवाभयप्रदः**—उदार चित्तसे अभय-दान देनेवाले, ६२६ **हनुमद्रुद्रमुख्येशः**—हनुमान्‌जी तथा भगवान् शङ्करके प्रधान आराध्यदेव, ६२७ **समस्तकपिदेहभृत्**—सम्पूर्ण वानरोंके शरीरोंका पोषण करनेवाले ॥२२७॥

सनागदैत्यबाणैकव्याकुलीकृतसागरः ।
सम्लेच्छकोटिबाणैकशुष्कनिर्दग्धसागरः ॥२२८॥

६२८ **सनागदैत्यबाणैकव्याकुलीकृतसागरः**—एक ही बाणसे नाग और दैत्योंसहित समुद्रको क्षुब्ध कर देनेवाले, ६२९ **सम्लेच्छकोटिबाणैकशुष्कनिर्दग्धसागरः**—एक ही बाणसे करोड़ों म्लेच्छोंसहित समुद्रको सुखा देने और जला डालनेवाले ॥२२८॥

समुद्राद्भुतपूर्वैकबद्धसेतुर्यशोनिधिः ।
असाध्यसाधको लङ्कासमूलोत्साददक्षिणः ॥२२९॥

६३० समुद्राद्भुतपूर्वैकबद्धसेतुः—समुद्रमें पहले-पहल एक अद्भुत पुल बाँधनेवाले, ६३१ यशोनिधिः—सुयशके भंडार, ६३२ असाध्यसाधकः—असम्भवको भी सम्भव कर दिखानेवाले, ६३३ लङ्कासमूलोत्साद-दक्षिणः—लङ्काको जड़से नष्ट कर डालनेमें दक्ष ॥२२९॥

वरदृप्तजगच्छल्यपौलस्त्यकुलकृन्तनः ।
रावणिघ्नः प्रहस्तच्छित्कुम्भकर्णभिदुग्रहा ॥२३०॥

६३४ वरदृप्तजगच्छल्यपौलस्त्यकुलकृन्तनः—वर पाकर घमंडसे भरे हुए तथा संसारके लिये कण्टकरूप रावणके कुलका उच्छेद करनेवाले, ६३५ रावणिघ्नः—लक्ष्मणरूपसे रावणके पुत्र मेघनादका वध करनेवाले, ६३६ प्रहस्तच्छित्—प्रहस्तका मस्तक काटनेवाले, ६३७ कुम्भ-कर्णभित्—कुम्भकर्णको विदीर्ण करनेवाले, ६३८ उग्रहा—भयङ्कर राक्षसोंका वध करनेवाले ॥२३०॥

रावणैकशिरश्छेत्ता निःशङ्केन्द्रैकराज्यदः ।
स्वर्गास्वर्गत्वविच्छेदी देवेन्द्रानिन्द्रताहरः ॥२३१॥

६३९ रावणैकशिरश्छेत्ता—रावणके सिर काटनेवाले एकमात्र वीर, ६४० निःशङ्केन्द्रैकराज्यदः—निःशङ्क होकर इन्द्रको एकमात्र राज्य देनेवाले, ६४१ स्वर्गास्वर्गत्व-विच्छेदी—स्वर्गकी अस्वर्गताको मिटा डालनेवाले,* ६४२ देवेन्द्रानिन्द्रताहरः—देवराज इन्द्रकी अनिन्द्रता दूर करनेवाले† ॥२३१॥

रक्षोदेवत्वहृद्धर्माधर्मत्वघ्नः पुरुष्टुतः ।
नतिमात्रदशास्यारिर्दत्तराज्यविभीषणः ॥२३२॥

६४३ रक्षोदेवत्वहृत्—राक्षसलोग जो देवताओंको हटाकर स्वयं देवता बन बैठे थे, उनके उस देवत्वको हर लेनेवाले, ६४४ धर्माधर्मत्वघ्नः—धर्मकी अधर्मताका नाश करनेवाले (राक्षसोंके कारण धर्म भी अधर्मरूपमें परिणत हो रहा था, भगवान् रामने उन्हें मारकर धर्मको पुनः अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित किया), ६४५ पुरुष्टुतः—

* राक्षसोंने 'स्वर्ग'का वैभव लूटकर उसे 'अस्वर्ग' बना दिया था, भगवान् रामने रावणको मारकर पुनः उसे अपनी प्रतिष्ठाके अनुरूप बनाया, स्वर्गकी अस्वर्गता दूर कर दी।

† रावणने इन्द्रको इन्द्रपदसे हटा दिया था, वे 'अनिन्द्र' (इन्द्रपदसे च्युत) हो गये थे; श्रीरामने उनकी अनिन्द्रता दूर की—उन्हें पुनः इन्द्रके सिंहासनपर बिठाया।

बहुत लोगोंके द्वारा स्तुत होनेवाले, ६४६ नतिमात्रदशा-स्यारिः—नत मस्तक होनेतक ही रावणको शत्रु माननेवाले, ६४७ दत्तराज्यविभीषणः—विभीषणको राज्य प्रदान करनेवाले ॥२३२॥

सुधावृष्टिमृताशेषस्वसैन्योज्जीवनैककृत् ।
देवब्राह्मणनामैकधाता सर्वामरार्चितः ॥२३३॥

६४८ सुधावृष्टिमृताशेषस्वसैन्योज्जीवनैककृत्—सुधाकी वर्षा कराकर अपने समस्त मरे हुए सैनिकोंको जीवन प्रदान करनेवाले, ६४९ देवब्राह्मणनामैकधाता—देवता और ब्राह्मणके नामोंके एकमात्र रक्षक, वे यदि न होते तो देवताओं एवं ब्राह्मणोंका नाम-निशान मिट जाता, ६५० सर्वामरार्चितः—सम्पूर्ण देवताओंसे पूजित ॥२३३॥

ब्रह्मसूर्येन्द्ररुद्रादिवृन्दार्पितसतीप्रियः ।
अयोध्याखिलराजाग्र्यः सर्वभूतमनोहरः ॥२३४॥

६५१ ब्रह्मसूर्येन्द्ररुद्रादिवृन्दार्पितसतीप्रियः—ब्रह्मा, सूर्य, इन्द्र तथा रुद्र आदि देवताओंके समूहद्वारा शुद्ध प्रमाणित करके समर्पित की हुई सती सीताके प्रियतम, ६५२ अयोध्याखिलराजाग्र्यः—अयोध्यापुरीके सम्पूर्ण राजाओंमें अग्रगण्य, ६५३ सर्वभूतमनोहरः—अपने सौन्दर्य-माधुर्यके कारण सम्पूर्ण प्राणियोंका मन हरने-वाले ॥२३४॥

स्वाम्यतुल्यकृपादण्डो हीनोत्कृष्टैकसत्प्रियः ।
श्वपक्ष्यादिन्यायदर्शी हीनार्थाधिकसाधकः ॥२३५॥

६५४ स्वाम्यतुल्यकृपादण्डः—प्रभुताके अनुरूप ही कृपा करने और दण्ड देनेवाले, ६५५ हीनोत्कृष्टैक-सत्प्रियः—ऊँच-नीच-सबके सच्चे प्रेमी, ६५६ श्वपक्ष्या-दिन्यायदर्शी—कुत्ते और पक्षी आदिके प्रति भी न्याय प्रदर्शित करनेवाले, ६५७ हीनार्थाधिकसाधकः—असहाय पुरुषोंके कार्यकी अधिक सिद्धि करनेवाले ॥२३५॥

वधव्याजानुचितकृत्तारकोऽखिलतुल्यकृत् ।
पाविञ्याधिक्यमुक्तात्मा प्रियात्यक्तः स्मरारिजित् ॥२३६॥

६५८ वधव्याजानुचितकृत्तारकः—अनुचित कर्म करनेवाले लोगोंका वधके बहाने उद्धार करनेवाले, ६५९ अखिलतुल्यकृत्—सबके साथ उसकी योग्यताके अनुरूप बर्ताव करनेवाले, ६६० पाविञ्याधिक्य-मुक्तात्मा—अधिक पवित्रताके कारण नित्यमुक्त स्वभाव-वाले, ६६१ प्रियात्यक्तः—प्रिय पत्नी सीतासे कुछ कालके लिये वियुक्त, ६६२ स्मरारिजित्—कामदेवके शत्रु भगवान् शिवको भी जीतनेवाले ॥२३६॥

साक्षात्कुशलवच्छद्मद्रावितो ह्यपराजितः ।
कोसलेन्द्रो वीरबाहुः सत्यार्थत्यक्तसोदरः ॥२३७॥

६६३ **साक्षात्कुशलवच्छद्मद्रावितः**—कुश और लवके रूपमें स्वयं अपने-आपसे युद्धमें हार जानेवाले, ६६४ **अपराजितः**—वास्तवमें कभी किसीके द्वारा भी परास्त न होनेवाले, ६६५ **कोसलेन्द्रः**—कोसल देशके ऐश्वर्यशाली सम्राट्, ६६६ **वीरबाहुः**—शक्तिशालिनी भुजाओंसे युक्त, ६६७ **सत्यार्थत्यक्तसोदरः**—सत्यकी रक्षाके लिये अपने भाई लक्ष्मणका त्याग करनेवाले ॥२३७॥

शरसंधाननिर्धूतधरणीमण्डलो जयः ।
ब्रह्मादिकामसांनिध्यसनाथीकृतदैवतः ॥२३८॥

६६८ **शरसंधाननिर्धूतधरणीमण्डलः**—बाणोंके संधानसे समस्त भूमण्डलको कँपा देनेवाले, ६६९ **जयः**—विजयशील, ६७० **ब्रह्मादिकामसांनिध्यसनाथीकृतदैवतः**—ब्रह्मा आदिकी कामनाके अनुसार समीपसे दर्शन देकर समस्त देवताओंको सनाथ करनेवाले ॥२३८॥

ब्रह्मलोकाप्तचाण्डालाद्यशेषप्राणिसार्थकः ।
स्वर्नीतगर्दभश्वादिश्चिरायोध्यावनैककृत् ॥२३९॥

६७१ **ब्रह्मलोकाप्तचाण्डालाद्यशेषप्राणिसार्थकः**—चाण्डाल आदि समस्त प्राणियोंको ब्रह्मलोकमें पहुँचाकर कृतार्थ करनेवाले, ६७२ **स्वर्नीतगर्दभश्वादिः**—गदहे और कुत्ते आदिको भी स्वर्गलोकमें ले जानेवाले, ६७३ **चिरायोध्यावनैककृत्**—चिरकालतक अयोध्याकी एकमात्र रक्षा करनेवाले ॥२३९॥

रामो द्वितीयसौमित्रिर्लक्ष्मणः प्रहतेन्द्रजित् ।
विष्णुभक्तः सरामाङ्घ्रिपादुकाराज्यनिर्वृतिः ॥२४०॥

६७४ **रामः**—मुनियोंका मन रमानेवाले भगवान् श्रीराम, ६७५ **द्वितीयसौमित्रिः**—सुमित्राकुमार लक्ष्मणको साथ रखनेवाले, ६७६ **लक्ष्मणः**—शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न लक्ष्मणरूप, ६७७ **प्रहतेन्द्रजित्**—लक्ष्मणरूपसे मेघनादका वध करनेवाले, ६७८ **विष्णुभक्तः**—विष्णुके अवतारभूत भगवान् श्रीरामके भक्त भरतरूप, ६७९—**सरामाङ्घ्रिपादुकाराज्यनिर्वृतिः**—श्रीरामचन्द्रजीकी चरणपादुकाके साथ मिले हुए राज्यसे संतुष्ट होनेवाले भरतरूप ॥२४०॥

भरतोऽसह्यगन्धर्वकोटिघ्नो लवणान्तकः ।
शत्रुघ्नो वैद्यराडायुर्वेदगर्भौषधीपतिः ॥२४१॥

६८० **भरतः**—प्रजाका भरण-पोषण करनेवाले कैकेयीकुमार भरतरूप, ६८१ **असह्यगन्धर्वकोटिघ्नः**—करोड़ों दुःसह गन्धर्वोंका वध करनेवाले, ६८२ **लवणान्तकः**—लवणासुरको मारनेवाले शत्रुघ्नरूप, ६८३ **शत्रुघ्नः**—शत्रुओंका वध करनेवाले सुमित्राके छोटे कुमार, ६८४ **वैद्यराट्**—वैद्योंके राजा धन्वन्तरिरूप, ६८५ **आयुर्वेदगर्भौषधीपतिः**—आयुर्वेदके भीतर वर्णित ओषधियोंके स्वामी ॥२४१॥

नित्यामृतकरो धन्वन्तरिर्यज्ञो जगद्धरः ।
सूर्यारिघ्नः सुराजीवो दक्षिणेशो द्विजप्रियः ॥२४२॥

६८६ **नित्यामृतकरः**—हाथोंमें सदा अमृत लिये रहनेवाले, ६८७ **धन्वन्तरिः**—धन्वन्तरि नामसे प्रसिद्ध एक वैद्य, जो समुद्रसे प्रकट हुए और भगवान् नारायणके अंश थे, ६८८ **यज्ञः**—यज्ञस्वरूप, ६८९ **जगद्धरः**—संसारके पालक, ६९० **सूर्यारिघ्नः**—सूर्यके शत्रु (केतु) को मारनेवाले, ६९१ **सुराजीवः**—अमृतके द्वारा देवताओंको जीवन प्रदान करनेवाले, ६९२ **दक्षिणेशः**—दक्षिण दिशाके स्वामी धर्मराजरूप, ६९३ **द्विजप्रियः**—ब्राह्मणोंके प्रियतम ॥२४२॥

छिन्नमूर्धापदेशार्कः शेषाङ्गस्थापितामरः ।
विश्वार्थाशेषकृद्राहुशिरश्छेत्ताक्षताकृतिः ॥२४३॥

६९४ **छिन्नमूर्धापदेशार्कः**—जिसका मस्तक कटा हुआ है तथा जो कहने मात्रके लिये सूर्य—'स्वर्भानु' नाम धारण करता है, ऐसा राहु नामक ग्रह, * ६९५ **शेषाङ्गस्थापितामरः**—जिसके शेष अङ्गोंमें अमरत्वकी स्थापना हुई है, ऐसा राहु, ६९६ **विश्वार्थाशेषकृत्**—संसारके सम्पूर्ण मनोरथोंको सिद्ध करनेवाले भगवान्, ६९७ **राहुशिरश्छेत्ता**—राहुका मस्तक काटनेवाले, ६९८ **अक्षताकृतिः**—स्वयं किसी प्रकारकी भी क्षतिसे रहित शरीरवाले ॥२४३॥

वाजपेयादिनामाग्निर्वेदधर्मपरायणः ।
श्वेतद्वीपपतिः सांख्यप्रणेता सर्वसिद्धिराट् ॥२४४॥

६९९ **वाजपेयादिनामाग्निः**—वाजपेय आदि नाम धारण करनेवाले अग्नि देवता, ७०० **वेदधर्मपरायणः**—वेदोक्त धर्मके परम आश्रय, ७०१ **श्वेतद्वीपपतिः**—श्वेतद्वीपके स्वामी, ७०२ **सांख्यप्रणेता**—सांख्यशास्त्रकी रचना करनेवाले कपिलस्वरूप, ७०३ **सर्वसिद्धिराट्**—सम्पूर्ण सिद्धियोंके राजा ॥२४४॥

---

* राहुका एक नाम 'स्वर्भानु' भी है; इस प्रकार कहनेके लिये तो वह भानु है, पर वास्तवमें अन्धकाररूप है। प्रत्येक ग्रह भगवान्की दिव्य विभूति है, इसलिये वह भी भगवत्स्वरूप ही है।

विश्वप्रकाशितज्ञानयोगमोहतमिस्रहा ।
देवहूत्यात्मजः सिद्धः कपिलः कर्दमात्मजः ॥२४५॥

७०४ **विश्वप्रकाशितज्ञानयोगमोहतमिस्रहा**—संसारमें ज्ञानयोगका प्रकाश करके मोहरूपी अन्धकारका नाश करनेवाले, ७०५ **देवहूत्यात्मजः**—मनुकुमारी देवहूतिके पुत्र, ७०६ **सिद्धः**—सब प्रकारकी सिद्धियोंसे परिपूर्ण, ७०७ **कपिलः**—कपिल नामसे प्रसिद्ध भगवान्‌के अवतार, ७०८ **कर्दमात्मजः**—कर्दम ऋषिके सुयोग्य पुत्र ॥ २४५ ॥

योगस्वामी ध्यानभंगसगरात्मजभस्मकृत् ।
धर्मो वृषेन्द्रः सुरभीपतिः शुद्धात्मभावितः ॥२४६॥

७०९ **योगस्वामी**—सांख्ययोगके स्वामी, ७१० **ध्यानभङ्गसगरात्मजभस्मकृत्**—ध्यान भङ्ग होनेसे सगर-पुत्रोंको भस्म कर डालनेवाले, ७११ **धर्मः**—जगत्‌को धारण करनेवाले धर्मके स्वरूप, ७१२ **वृषेन्द्रः**—श्रेष्ठ वृषभकी आकृति धारण करनेवाले, ७१३ **सुरभीपतिः**—सुरभी गौके स्वामी, ७१४ **शुद्धात्मभावितः**—शुद्ध अन्तःकरणमें चिन्तन किये जानेवाले ॥२४६॥

शम्भुस्त्रिपुरदाहैकस्थैर्यविश्वरथोद्वहः ।
भक्तशम्भुजितो दैत्यामृतवापीसमस्तपः ॥२४७॥

७१५ **शम्भुः**—कल्याणकी उत्पत्तिके स्थानभूत, शिव-स्वरूप, ७१६ **त्रिपुरदाहैकस्थैर्यविश्वरथोद्वहः**—त्रिपुर-का दाह करनेके समय एकमात्र स्थिर रहनेवाले और विश्वमय रथका वहन करनेवाले, ७१७ **भक्तशम्भुजितः**—अपने भक्त शिवके द्वारा पराजित, ७१८ **दैत्यामृतवापी-समस्तपः**—त्रिपुरनिवासी दैत्योंकी अमृतसे भरी हुई सारी बावलीको गौरूपसे पी जानेवाले ॥२४७॥

महाप्रलयविश्वैकनिलयोऽखिलनागराट् ।
शेषदेवः सहस्राक्षः सहस्रास्यशिरोभुजः ॥२४८॥

७१९ **महाप्रलयविश्वैकनिलयः**—महाप्रलयके समय सम्पूर्ण विश्वके एकमात्र निवासस्थान, ७२० **अखिल-नागराट्**—सम्पूर्ण नागोंके राजा शेषनागस्वरूप, ७२१ **शेषदेवः**—प्रलयकालमें भी शेष रहनेवाले देवता, ७२२ **सहस्राक्षः**—सहस्रों नेत्रवाले, ७२३ **सहस्रास्यशिरो-भुजः**—सहस्रों मुख, मस्तक और भुजाओंवाले ॥२४८॥

फणामणिकणाकारयोजिताच्छाम्बुदक्षितिः ।
कालाग्निरुद्रजनको मुशलास्त्रो हलायुधः ॥२४९॥

७२४ **फणामणिकणाकारयोजिताच्छाम्बुद-क्षितिः**—फणोंकी मणियोंके कणोंके आकारसे पृथ्वीपर श्वेत बादलोंकी घटा-सी छा देनेवाले, ७२५ **कालाग्निरुद्र-जनकः**—भयङ्कर कालाग्नि एवं संहारमूर्ति रुद्रको प्रकट करनेवाले, ७२६ **मुशलास्त्रः**—मुशलको अस्त्ररूपमें ग्रहण करनेवाले शेषावतार बलरामरूप, ७२७ **हलायुधः**—हलरूपी आयुधवाले ॥२४९॥

नीलाम्बरो वारुणीशो मनोवाक्कायदोषहा ।
असंतोषदृष्टिमात्रपातितैकदशाननः ॥२५०॥

७२८ **नीलाम्बरः**—नीलवस्त्रधारी, ७२९ **वारु-णीशः**—वारुणीके स्वामी, ७३० **मनोवाक्कायदोषहा**—मन, वाणी और शरीरके दोष दूर करनेवाले, ७३१ **असंतोष-दृष्टिमात्रपातितैकदशाननः**—असंतोषपूर्ण दृष्टि डालने-मात्रसे ही पातालमें गये हुए रावणको गिरा देनेवाले शेषनागरूप ॥२५०॥

बिलसंयमनो घोरो रौहिणेयः प्रलम्बहा ।
मुष्टिकघ्नो द्विविदहा कालिन्दीकर्षणो बलः ॥२५१॥

७३२ **बिलसंयमनः**—सातों पाताललोकोंको काबूमें रखनेवाले, ७३३ **घोरः**—प्रलयके समय भयङ्कर आकृति धारण करनेवाले, ७३४ **रौहिणेयः**—रोहिणीके पुत्र, ७३५ **प्रलम्बहा**—प्रलम्ब दानवको मारनेवाले, ७३६ **मुष्टिकघ्नः**—मुष्टिकके प्राण लेनेवाले, ७३७ **द्विविदहा**—द्विविद नामक वीर वानरका वध करनेवाले, ७३८ **कालिन्दीकर्षणः**—यमुनाकी धाराको खींचनेवाले, ७३९ **बलः**—बलके मूर्तिमान् स्वरूप ॥२५१॥

रेवतीरमणः पूर्वभक्तिखेदाच्युताग्रजः ।
देवकीवसुदेवाह्वकश्यपादितिनन्दनः ॥२५२॥

७४० **रेवतीरमणः**—अपनी पत्नी रेवतीके साथ रमण करनेवाले, ७४१ **पूर्वभक्तिखेदाच्युताग्रजः**—पूर्वजन्ममें लक्ष्मणरूपसे भगवान्‌की निरन्तर सेवा करते-करते थके रहनेके कारण दूसरे जन्ममें भगवान्‌की इच्छासे उनके ज्येष्ठ बन्धुके रूपमें अवतार लेनेवाले बलरामरूप, ७४२ **देवकी-वसुदेवाह्वकश्यपादितिनन्दनः**—वसुदेव और देवकीके नामसे प्रसिद्ध महर्षि कश्यप और अदितिको पुत्ररूपसे आनन्द देनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण ॥२५२॥

वार्ष्णेयः सात्वतां श्रेष्ठः शौरिर्यदुकुलेश्वरः ।
नराकृतिः परं ब्रह्म सव्यसाचिवरप्रदः ॥२५३॥

७४३ **वार्ष्णेयः**—वृष्णिकुलमें उत्पन्न, ७४४ **सात्वतां श्रेष्ठः**—सात्वत कुलमें सर्वश्रेष्ठ, ७४५ **शौरिः**—शूरसेनके कुलमें अवतीर्ण, ७४६ **यदुकुलेश्वरः**—यदुकुलके स्वामी,

७४७ नराकृतिः—मानव-शरीर धारण करनेवाले श्रीकृष्ण, **७४८ परं ब्रह्म**—वस्तुतः परमात्मा, **७४९ सव्यसाचिवरप्रदः**—अर्जुनको वर देनेवाले ॥२५३॥

ब्रह्मादिकाम्यलालित्यजगदाश्चर्यशैशवः ।
पूतनाघ्नः शकटभिद्यमलार्जुनभञ्जकः ॥२५४॥

७५० ब्रह्मादिकाम्यलालित्यजगदाश्चर्यशैशवः—ब्रह्मा आदि भी जिन्हें देखनेकी इच्छा रखते हैं तथा जो सम्पूर्ण जगत्को आश्चर्यमें डालनेवाली हैं, ऐसी ललित बाललीलाओंसे युक्त श्रीकृष्ण, **७५१ पूतनाघ्नः**—पूतनाके प्राण लेनेवाले, **७५२ शकटभित्**—लातके हल्के आघातसे छकड़ेको चकनाचूर कर देनेवाले, **७५३ यमलार्जुनभञ्जकः**—यमलार्जुन नामसे प्रसिद्ध दो जुड़वें वृक्षोंको तोड़ डालनेवाले ॥२५४॥

वातासुरारिः केशिघ्नो धेनुकारिर्गवीश्वरः ।
दामोदरो गोपदेवो यशोदानन्ददायकः ॥२५५॥

७५४ वातासुरारिः—तृणावर्तके शत्रु, **७५५ केशिघ्नः**—केशी नामक दैत्यको मारनेवाले, **७५६ धेनुकारिः**—धेनुकासुरके शत्रु, **७५७ गवीश्वरः**—गौओंके स्वामी, **७५८ दामोदरः**—उदरमें यशोदा मैयाद्वारा रस्सी बाँधी जानेके कारण दामोदर नाम धारण करनेवाले, **७५९ गोपदेवः**—ग्वालोंके इष्टदेव, **७६० यशोदानन्ददायकः**—यशोदा मैयाको आनन्द देनेवाले ॥२५५॥

कालीयमर्दनः सर्वगोपगोपीजनप्रियः ।
लीलागोवर्धनधरो गोविन्दो गोकुलोत्सवः ॥२५६॥

७६१ कालीयमर्दनः—कालिय नागका मान-मर्दन करनेवाले, **७६२ सर्वगोपगोपीजनप्रियः**—समस्त गोपों और गोपियोंके प्रियतम, **७६३ लीलागोवर्धनधरः**—अनायास ही गोवर्धन पर्वतको अँगुलीपर उठा लेनेवाले, **७६४ गोविन्दः**—इन्द्रकी वर्षासे गौओंकी रक्षा करनेके कारण कामधेनुद्वारा 'गोविन्द' पदपर अभिषिक्त भगवान् श्रीकृष्ण, **७६५ गोकुलोत्सवः**—गोकुलनिवासियोंको निरन्तर आनन्द प्रदान करनेके कारण उत्सवरूप ॥२५६॥

अरिष्टमथनः कामोन्मत्तगोपीविमुक्तिदः ।
सद्यःकुवलयापीडघाती चाणूरमर्दनः ॥२५७॥

७६६ अरिष्टमथनः—अरिष्टासुरको नष्ट करनेवाले, **७६७ कामोन्मत्तगोपीविमुक्तिदः**—प्रेमविभोर गोपीको मुक्ति प्रदान करनेवाले, **७६८ सद्यःकुवलयापीडघाती**—कुवलयापीड नामक हाथीको शीघ्र मार गिरानेवाले, **७६९ चाणूरमर्दनः**—चाणूर नामक मल्लको कुचल डालनेवाले॥२५७॥

कंसारिरुग्रसेनादिराज्यव्यापारितामरः ।
सुधर्माङ्कितभूलोको जरासंधबलान्तकः ॥२५८॥

७७० कंसारिः—मथुराके राजा कंसके शत्रु, **७७१ उग्रसेनादिराज्यव्यापारितामरः**—राज्यसम्बन्धी कार्योंमें उग्रसेन आदिके रूपमें देवताओंको ही नियुक्त करनेवाले, **७७२ सुधर्माङ्कितभूलोकः**—देवोचित सुधर्मानामक सभासे भूलोकको भी सुशोभित करनेवाले, **७७३ जरासंधबलान्तकः**—जरासंधकी सेनाका संहार करनेवाले ॥२५८॥

त्यक्तभग्नजरासंधो भीमसेनयशःप्रदः ।
सांदीपनिमृतापत्यदाता कालान्तकादिजित् ॥२५९॥

७७४ त्यक्तभग्नजरासंधः—युद्धसे भगे हुए जरासंधको जीवित छोड़ देनेवाले, **७७५ भीमसेनयशःप्रदः**—युक्तिसे जरासंधका वध कराकर भीमसेनको यश प्रदान करनेवाले, **७७६ सांदीपनिमृतापत्यदाता**—अपने विद्यागुरु सांदीपनिके मरे हुए पुत्रको पुनः ला देनेवाले, **७७७ कालान्तकादिजित्**—काल और अन्तक आदिपर विजय पानेवाले ॥२५९॥

समस्तनारकत्राता सर्वभूपतिकोटिजित् ।
रुक्मिणीरमणो रुक्मिशासनो नरकान्तकः ॥२६०॥

७७८ समस्तनारकत्राता—शरणमें आनेपर नरकमें पड़े हुए समस्त प्राणियोंका भी उद्धार करनेवाले, **७७९ सर्वभूपतिकोटिजित्**—रुक्मिणीके विवाहमें करोड़ोंकी संख्यामें आये हुए समस्त राजाओंको परास्त करनेवाले, **७८० रुक्मिणीरमणः**—रुक्मिणीके साथ रमण करनेवाले, **७८१ रुक्मिशासनः**—रुक्मीको दण्ड देनेवाले, **७८२ नरकान्तकः**—नरकासुरका विनाश करनेवाले ॥२६०॥

समस्तसुन्दरीकान्तो मुरारिर्गरुडध्वजः ।
एकाकिजितरुद्रार्कमरुदाद्यखिलेश्वरः ॥२६१॥

७८३ समस्तसुन्दरीकान्तः—समस्त सुन्दरियाँ जिन्हें पानेकी इच्छा करती हैं, **७८४ मुरारिः**—मुर नामक दानवके शत्रु, **७८५ गरुडध्वजः**—गरुडके चिह्नसे चिह्नित ध्वजावाले, **७८६ एकाकिजितरुद्रार्कमरुदाद्यखिलेश्वरः**—अकेले ही रुद्र, सूर्य और वायु आदि समस्त लोकपालोंको जीतनेवाले ॥२६१॥

देवेन्द्रदर्पहा कल्पद्रुमालंकृतभूतलः ।
बाणबाहुसहस्रच्छिन्नन्द्यादिगणकोटिजित् ॥२६२॥

७८७ देवेन्द्रदर्पहा—देवराज इन्द्रका अभिमान चूर्ण

करनेवाले, ७८८ **कल्पद्रुमालंकृतभूतलः**—कल्पवृक्षको स्वर्गसे लाकर उसके द्वारा भूतलकी शोभा बढ़ानेवाले, ७८९ **बाणबाहुसहस्रच्छित्**—बाणासुरकी सहस्र भुजाओंका उच्छेद करनेवाले, ७९० **नन्द्यादिगणकोटिजित्**—नन्दी आदि करोड़ों शिवगणोंको परास्त करनेवाले ॥ २६२ ॥

लीलाजितमहादेवो महादेवैकपूजितः ।
इन्द्रार्थार्जुननिर्भङ्गजयदः पाण्डवैकधृक् ॥२६३॥

७९१ **लीलाजितमहादेवः**—अनायास ही महादेवजीपर विजय पानेवाले, ७९२ **महादेवैकपूजितः**—महादेवजीके द्वारा एकमात्र पूजित, ७९३ **इन्द्रार्थार्जुननिर्भङ्गजयदः**—इन्द्रकी प्रसन्नताके लिये अर्जुनको अखण्ड विजय प्रदान करनेवाले, ७९४ **पाण्डवैकधृक**—पाण्डवोंके एकमात्र रक्षक ॥ २६३ ॥

काशिराजशिरश्छेत्ता रुद्रशक्त्येकमर्दनः ।
विश्वेश्वरप्रसादाढ्यः काशिराजसुतार्दनः ॥२६४॥

७९५ **काशिराजशिरश्छेत्ता**—काशिराजका मस्तक काट देनेवाले, ७९६ **रुद्रशक्त्येकमर्दनः**—रुद्रकी शक्तिके एकमात्र मर्दन करनेवाले, ७९७ **विश्वेश्वरप्रसादाढ्यः**—काशीविश्वनाथकी प्रसन्नता प्राप्त करनेवाले, ७९८ **काशिराजसुतार्दनः**—काशीनरेशके पुत्रको पीड़ा देनेवाले ॥ २६४ ॥

शम्भुप्रतिज्ञाविध्वंसी काशीनिर्दग्धनायकः ।
काशीशगणकोटिघ्नो लोकशिक्षाद्विजार्चकः ॥२६५॥

७९९ **शम्भुप्रतिज्ञाविध्वंसी**—शङ्करजीकी प्रतिज्ञा तोड़नेवाले, ८०० **काशीनिर्दग्धनायकः**—जिन्होंने काशीको जलाकर अनाथ-सी कर दिया था, वे भगवान् श्रीकृष्ण, ८०१ **काशीशगणकोटिघ्नः**—काशीपति विश्वेश्वरके करोड़ों गणोंका नाश करनेवाले, ८०२ **लोकशिक्षाद्विजाचकः**—लोकको शिक्षा देनेके लिये सुदामा आदि ब्राह्मणोंकी पूजा करनेवाले।२६५।

शिवतीव्रतपोवश्यः पुराशिववरप्रदः ।
शङ्करैकप्रतिष्ठाधृक्स्वांशशङ्करपूजकः ॥२६६॥

८०३ **शिवतीव्रतपोवश्यः**—शिवजीकी तीव्र तपस्याके वशीभूत होनेवाले, ८०४ **पुराशिववरप्रदः**—पूर्वकालमें शिवजीको वरदान देनेवाले, ८०५ **शङ्करैकप्रतिष्ठाधृक्**—भगवान् शङ्करकी एकमात्र प्रतिष्ठा करनेवाले, ८०६—**स्वांशशङ्करपूजकः**—अपने अंशभूत शङ्करकी पूजा करनेवाले ॥ २६६ ॥

शिवकन्याव्रतपतिः कृष्णरूपशिवारिहा ।
महालक्ष्मीवपुर्गौरीत्राता वैदलवृत्रहा ॥२६७॥

८०७ **शिवकन्याव्रतपतिः**—शिवकी कन्याके व्रतकी रक्षा करनेवाले, ८०८ **कृष्णरूपशिवारिहा**—कृष्णरूपसे शिवके शत्रु (भस्मासुर) का संहार करनेवाले, ८०९ **महालक्ष्मीवपुर्गौरीत्राता**—महालक्ष्मीका शरीर धारण करनेवाली पार्वतीके रक्षक, ८१० **वैदलवृत्रहा**—वैदलवृत्र नामक दैत्यका वध करनेवाले ॥ २६७ ॥

स्वधाममुचुकुन्दैकनिष्कालयवनेष्टकृत् ।
यमुनापतिरानीतपरिलीनद्विजात्मजः ॥२६८॥

८११ **स्वधाममुचुकुन्दैकनिष्कालयवनेष्टकृत्**—अपने तेजःस्वरूप राजा मुचुकुन्दके द्वारा केवल कालयवनका नाश कराकर उन्हें अभीष्ट वरदान देनेवाले, ८१२ **यमुनापतिः**—सूर्यकन्या यमुनाको पत्नीरूपसे ग्रहण करनेवाले, ८१३ **आनीतपरिलीनद्विजात्मजः**—मरे हुए ब्राह्मण-पुत्रोंको पुनः लानेवाले ॥ २६८ ॥

श्रीदामरङ्कभक्तार्थभूम्यानीतेन्द्रवैभवः ।
दुर्वृत्तशिशुपालैकमुक्तिदो द्वारकेश्वरः ॥२६९॥

८१४ **श्रीदामरङ्कभक्तार्थभूम्यानीतेन्द्रवैभवः**—अपने दीन भक्त श्रीदामा (सुदामा) के लिये पृथ्वीपर इन्द्रके समान वैभव उपस्थित करनेवाले, ८१५ **दुर्वृत्तशिशुपालैकमुक्तिदः**—दुराचारी शिशुपालको एकमात्र मोक्ष प्रदान करनेवाले, ८१६ **द्वारकेश्वरः**—द्वारकाके स्वामी ॥२६९॥

आचाण्डालादिकप्राप्यद्वारकानिधिकोटिकृत् ।
अक्रूरोद्धवमुख्यैकभक्तः स्वच्छन्दमुक्तिदः ॥२७०॥

८१७ **आचाण्डालादिकप्राप्यद्वारकानिधिकोटिकृत्**—द्वारकामें चाण्डाल आदितकके लिये सुलभ होनेवाली करोड़ों निधियोंका संग्रह करनेवाले, ८१८ **अक्रूरोद्धवमुख्यैकभक्तः**—अक्रूर और उद्धव आदि प्रधान भक्तोंके साथ रहनेवाले, ८१९ **स्वच्छन्दमुक्तिदः**—इच्छानुसार मुक्ति देनेवाले ॥ २७० ॥

सबालस्त्रीजलक्रीडामृतवापीकृतार्णवः ।
ब्रह्मास्त्रदग्धगर्भस्थपरीक्षिज्जीवनैककृत् ॥२७१॥

८२० **सबालस्त्रीजलक्रीडामृतवापीकृतार्णवः**—बालकों और स्त्रियोंके जल-विहार करनेके लिये समुद्रको अमृतमयी बावलीके समान बना देनेवाले, ८२१ **ब्रह्मास्त्रदग्धगर्भस्थपरीक्षिज्जीवनैककृत्**—अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रसे दग्ध हुए गर्भस्थ परीक्षित्‌को एकमात्र जीवन-दान देनेवाले ॥ २७१ ॥

परिलीनद्विजसुतानेतार्जुनमदापहः ।
गूढमुद्राकृतिग्रस्तभीष्माद्यखिलकौरवः ॥२७२॥

८२२ **परिलीनद्विजसुतानेता**—नष्ट हुए ब्राह्मण-कुमारोंको पुनः ले आनेवाले, ८२३ **अर्जुनमदापहः**—अर्जुनका घमंड दूर करनेवाले, ८२४ **गूढमुद्राकृतिग्रस्तभीष्माद्यखिलकौरवः**—गम्भीर मुद्रावाली आकृति बनाकर भीष्म आदि समस्त कौरवोंको कालका ग्रास बनानेवाले ॥ २७२ ॥

यथार्थखण्डिताशेषदिव्यास्त्रपार्थमोहहृत् ।
गर्भशापच्छलध्वस्तयादवोर्वीभरापहः ॥२७३॥

८२५ **यथार्थखण्डिताशेषदिव्यास्त्रपार्थमोहहृत्**—समस्त दिव्यास्त्रोंका भलीभाँति खण्डन करनेवाले अर्जुनके मोहको हरनेवाले, ८२६ **गर्भशापच्छलध्वस्तयादवोर्वीभरापहः**—स्त्रीरूप धारण करके गये हुए साम्बके गर्भको मुनियोंद्वारा शाप दिलानेके बहाने पृथ्वीके भारभूत समस्त यादवोंका संहार करानेवाले ॥ २७३ ॥

जराव्याधारिगतिदः स्मृतमात्राखिलेष्टदः ।
कामदेवो रतिपतिर्मन्मथः शम्बरान्तकः ॥२७४॥

८२७ **जराव्याधारिगतिदः**—शत्रुका काम करनेवाले जरा नामक व्याधको उत्तम गति प्रदान करनेवाले, ८२८ **स्मृतमात्राखिलेष्टदः**—स्मरण करनेमात्रसे सम्पूर्ण अभीष्ट पदार्थोंको देनेवाले, ८२९ **कामदेवः**—कामदेवस्वरूप, ८३० **रतिपतिः**—रतिके स्वामी, ८३१ **मन्मथः**—विचारशक्तिका नाश करनेवाले कामदेवरूप, ८३२ **शम्बरान्तकः**—शम्बरासुरके प्राणहन्ता ॥ २७४ ॥

अनङ्गो जितगौरीशो रतिकान्तः सदेप्सितः ।
पुष्पेषुर्विश्वविजयी स्मरः कामेश्वरीप्रियः ॥२७५॥

८३३ **अनङ्गः**—अङ्गरहित, ८३४ **जितगौरीशः**—गौरीपति शङ्करको भी जीतनेवाले, ८३५ **रतिकान्तः**—रतिके प्रियतम, ८३६ **सदेप्सितः**—कामी पुरुषोंको सदा अभीष्ट, ८३७ **पुष्पेषुः**—पुष्पमय बाणवाले, ८३८ **विश्वविजयी**—सम्पूर्ण जगत्पर विजय पानेवाले, ८३९ **स्मरः**—विषयोंके स्मरणमात्रसे मनमें प्रकट हो जानेवाले, ८४० **कामेश्वरीप्रियः**—कामेश्वरी—रतिके प्रेमी ॥ २७५ ॥

ऊषापतिर्विश्वकेतुर्विश्वतृप्तोऽधिपूरुषः ।
चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्युगविधायकः ॥२७६॥

८४१ **ऊषापतिः**—बाणासुरकी कन्या ऊषाके स्वामी अनिरुद्धरूप, ८४२ **विश्वकेतुः**—विश्वमें विजय-पताका फहरानेवाले, ८४३ **विश्वतृप्तः**—सब ओरसे तृप्त, ८४४ **अधिपूरुषः**—अन्तर्यामी साक्षी चेतन, ८४५ **चतुरात्मा**—मन, बुद्धि, अहंकार और चित्तरूप चार अन्तःकरणवाले, ८४६ **चतुर्व्यूहः**—वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध—इन चार व्यूहोंसे युक्त, ८४७ **चतुर्युगविधायकः**—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग—इन चार युगोंका विधान करनेवाले ॥ २७६ ॥

चतुर्वेदैकविश्वात्मा सर्वोत्कृष्टांशकोटिसूः ।
आश्रमात्मा पुराणर्षिर्व्यासः शाखासहस्रकृत् ॥२७७॥

८४८ **चतुर्वेदैकविश्वात्मा**—चारों वेदोंद्वारा प्रतिपादित एकमात्र सम्पूर्ण विश्वके आत्मा, ८४९ **सर्वोत्कृष्टांशकोटिसूः**—सबसे श्रेष्ठ कोटि-कोटि अंशोंको जन्म देनेवाले, ८५० **आश्रमात्मा**—आश्रमधर्मरूप, ८५१ **पुराणर्षिः**—पुराणोंके प्रकाशक ऋषि, ८५२ **व्यासः**—वेदोंका विस्तार करनेवाले, ८५३ **शाखासहस्रकृत्**—सामवेदकी सहस्र शाखाओंका सम्पादन करनेवाले ॥ २७७ ॥

महाभारतनिर्माता कवीन्द्रो बादरायणः ।
कृष्णद्वैपायनः सर्वपुरुषार्थैकबोधकः ॥२७८॥

८५४ **महाभारतनिर्माता**—महाभारत ग्रन्थके रचयिता, ८५५ **कवीन्द्रः**—कवियोंके राजा, ८५६ **बादरायणः**—बदरी-वनमें उत्पन्न भगवान् वेदव्यासरूप, ८५७ **कृष्णद्वैपायनः**—द्वीपमें उत्पन्न श्याम वर्णवाले व्यासजी, ८५८ **सर्वपुरुषार्थैकबोधकः**—समस्त पुरुषार्थोंके एकमात्र बोध करानेवाले ॥ २७८ ॥

वेदान्तकर्ता ब्रह्मैकव्यञ्जकः पुरुवंशकृत् ।
बुद्धो ध्यानजिताशेषदेवदेवीजगत्प्रियः ॥२७९॥

८५९ **वेदान्तकर्ता**—वेदान्तसूत्रोंके रचयिता, ८६० **ब्रह्मैकव्यञ्जकः**—एक अद्वितीय ब्रह्मकी अभिव्यक्ति करानेवाले, ८६१ **पुरुवंशकृत्**—पुरुवंशकी परम्परा सुरक्षित रखनेवाले, ८६२ **बुद्धः**—भगवान्के अवतार बुद्धदेव, ८६३ **ध्यानजिताशेषदेवदेवीजगत्प्रियः**—ध्यानके द्वारा समस्त देव-देवियोंको जीतकर जगत्के प्रियतम बननेवाले ॥ २७९ ॥

निरायुधो जगज्जैत्रः श्रीधनो दुष्टमोहनः ।
दैत्यवेदबहिष्कर्ता वेदार्थश्रुतिगोपकः ॥२८०॥

८६४ **निरायुधः**—अस्त्र-शस्त्रोंका त्याग करनेवाले, ८६५ **जगज्जैत्रः**—सम्पूर्ण जगत्को वशमें करनेवाले, ८६६ **श्रीधनः**—शोभाके धनी, ८६७ **दुष्टमोहनः**—दुष्टोंको मोहित करनेवाले, ८६८ **दैत्यवेदबहिष्कर्ता**—दैत्योंको वेदसे बहिष्कृत करनेवाले, ८६९ **वेदार्थश्रुतिगोपकः**—वेदोंके अर्थ और श्रुतियोंको गुप्त रखनेवाले ॥ २८० ॥

शौद्धोदनिर्दृष्टदिष्टः सुखदः सदसस्पतिः ।
यथायोग्याखिलकृपः सर्वशून्योऽखिलेष्टदः ॥२८१॥

८७० **शौद्धोदनिः**—कपिलवस्तुके राजा शुद्धोदनके पुत्र, ८७१ **दृष्टदिष्टः**—दैवके विधानको प्रत्यक्ष देखनेवाले, ८७२ **सुखदः**—सबको सुख देनेवाले, ८७३ **सदसस्पतिः**—सत्पुरुषोंकी सभाके अध्यक्ष, ८७४ **यथायोग्याखिलकृपः**—यथायोग्य सम्पूर्ण जीवोंपर कृपा रखनेवाले, ८७५ **सर्वशून्यः**—सम्पूर्ण पदार्थोंको शून्यरूप ही माननेवाले, ८७६ **अखिलेष्टदः**—सबको सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ देनेवाले ॥ २८१ ॥

चतुष्कोटिपृथक्तत्त्वप्रज्ञापारमितेश्वरः ।
पाखण्डवेदमार्गेशः पाखण्डश्रुतिगोपकः ॥२८२॥

८७७ **चतुष्कोटिपृथक्**—स्थावर आदि चार श्रेणियोंमें विभक्त हुई सृष्टिसे पृथक्, ८७८ **तत्त्वप्रज्ञापारमितेश्वरः**—तत्त्वभूत प्रज्ञापारमिता[1] (बुद्धिकी पराकाष्ठा) के ईश्वर, ८७९ **पाखण्डवेदमार्गेशः**—पाखण्ड-वेदमार्गके स्वामी, ८८० **पाखण्डश्रुतिगोपकः**—पाखण्डके द्वारा प्रतिपादित वेदकी श्रुतियोंके रक्षक ॥ २८२ ॥

कल्की विष्णुयशःपुत्रः कलिकालविलोपकः ।
समस्तम्लेच्छदुष्टघ्नः सर्वशिष्टद्विजातिकृत् ॥२८३॥

८८१ **कल्की**—कलियुगके अन्तमें होनेवाला भगवान्‌का एक अवतार, ८८२ **विष्णुयशःपुत्रः**—श्रीविष्णुयशाके पुत्र भगवान् कल्कि, ८८३ **कलिकालविलोपकः**—कलियुगका लोप करके सत्ययुगका प्रवेश करानेवाले, ८८४ **समस्तम्लेच्छदुष्टघ्नः**—सम्पूर्ण म्लेच्छों और दुष्टोंका वध करनेवाले, ८८५ **सर्वशिष्टद्विजातिकृत्**—सबको श्रेष्ठ द्विज बनानेवाले अथवा समस्त साधु द्विजातियोंके रक्षक ॥ २८३ ॥

सत्यप्रवर्तको देवद्विजदीर्घक्षुधापहः ।
अश्ववारादिरेकान्तपृथ्वीदुर्गतिनाशनः ॥२८४॥

८८६ **सत्यप्रवर्तकः**—सत्ययुगकी प्रवृत्ति करानेवाले, ८८७ **देवद्विजदीर्घक्षुधापहः**—[यज्ञ और ब्राह्मण-भोजन आदिका प्रचार करके] देवताओं और ब्राह्मणोंकी बढ़ी हुई भूखको शान्त करनेवाले, ८८८ **अश्ववारादिः**—घुड़सवारोंमें श्रेष्ठ, ८८९ **एकान्तपृथ्वीदुर्गतिनाशनः**—पृथ्वीकी दुर्गतिका पूर्णतया नाश करनेवाले ॥ २८४ ॥

सद्यःक्ष्मानन्तलक्ष्मीकृन्नष्टनिःशेषधर्मवित् ।
अनन्तस्वर्णयागैकहेमपूर्णाखिलद्विजः ॥२८५॥

८९० **सद्यःक्ष्मानन्तलक्ष्मीकृत्**—पृथ्वीको शीघ्र ही अनन्त लक्ष्मीसे परिपूर्ण करनेवाले, ८९१ **नष्टनिःशेषधर्मवित्**—नष्ट हुए सम्पूर्ण धर्मोंके ज्ञाता, ८९२ **अनन्तस्वर्णयागैकहेमपूर्णाखिलद्विजः**—अनन्त सुवर्णकी दक्षिणाओंसे युक्त यज्ञोंका अनुष्ठान कराकर सम्पूर्ण ब्राह्मणोंको स्वर्णसे सम्पन्न करनेवाले ॥ २८५ ॥

असाध्यैकजगच्छास्ता विश्वबन्धो जयध्वजः ।
आत्मतत्त्वाधिपः कर्तृश्रेष्ठो विधिरुमापतिः ॥२८६॥

८९३ **असाध्यैकजगच्छास्ता**—किसीके वशमें न होनेवाले सम्पूर्ण जगत्‌के एकमात्र शासक, ८९४ **विश्वबन्धः**—समस्त विश्वको अपनी मायासे बाँध रखनेवाले, ८९५ **जयध्वजः**—सर्वत्र अपनी विजयपताका फहरानेवाले, ८९६ **आत्मतत्त्वाधिपः**—आत्मतत्त्वके स्वामी, ८९७ **कर्तृश्रेष्ठः**—कर्ताओंमें श्रेष्ठ, ८९८ **विधिः**—शास्त्रीय विधिरूप, ८९९ **उमापतिः**—उमाके स्वामी ॥ २८६ ॥

भर्तृश्रेष्ठः प्रजेशाग्र्यो मरीचिर्जनकाग्रणीः ।
कश्यपो देवराडिन्द्रः प्रह्लादो दैत्यराट् शशी ॥२८७॥

९०० **भर्तृश्रेष्ठः**—भरण-पोषण करनेवालोंमें सर्वश्रेष्ठ, ९०१ **प्रजेशाग्र्यः**—प्रजापतियोंमें अग्रगण्य, ९०२ **मरीचिः**—मरीचि नामक प्रजापतिरूप, ९०३ **जनकाग्रणीः**—जन्म देनेवाले प्रजापतियोंमें श्रेष्ठ, ९०४ **कश्यपः**—सर्वद्रष्टा कश्यप मुनिस्वरूप, ९०५ **देवराट्**—देवताओंके राजा, ९०६ **इन्द्रः**—परम ऐश्वर्यशाली इन्द्रस्वरूप, ९०७ **प्रह्लादः**—भगवद्भक्तिके प्रभावसे अत्यन्त आह्लादपूर्ण रानी कयाधूके पुत्ररूप, ९०८ **दैत्यराट्**—दैत्योंके स्वामी प्रह्लादरूप, ९०९ **शशी**—खरगोशका चिह्न धारण करनेवाले चन्द्रमारूप ॥ २८७ ॥

नक्षत्रेशो रविस्तेजःश्रेष्ठः शुक्रः कवीश्वरः ।
महर्षिराड्भृगुर्विष्णुरादित्येशो बलिस्वराट् ॥२८८॥

९१० **नक्षत्रेशः**—नक्षत्रोंके स्वामी चन्द्रमारूप, ९११ **रविः**—सूर्यस्वरूप, ९१२ **तेजःश्रेष्ठः**—तेजस्वियोंमें सबसे श्रेष्ठ, ९१३ **शुक्रः**—भृगुके पुत्र शुक्राचार्यस्वरूप, ९१४ **कवीश्वरः**—कवियोंके स्वामी, ९१५ **महर्षिराट्**—महर्षियोंमें अधिक तेजस्वी, ९१६ **भृगुः**—ब्रह्माजीके पुत्र प्रजापति भृगुस्वरूप, ९१७ **विष्णुः**—बारह आदित्योंमेंसे एक, ९१८ **आदित्येशः**—बारह आदित्योंके स्वामी, ९१९ **बलिस्वराट्**—बलिको इन्द्र बनानेवाले ॥ २८८ ॥

वायुर्वह्निः शुचिश्रेष्ठः शङ्करो रुद्रराड्गुरुः ।
चिद्वत्तमश्चित्ररथो गन्धर्वाग्र्योऽक्षरोत्तमः ॥२८९॥

९२० **वायुः**—वायुतत्त्वके अधिष्ठाता देवता,

[1] १–दस पारमिताओंमेंसे एकका नाम प्रज्ञापारमिता है ।

९२१ वह्निः—अग्नितत्त्वके अधिष्ठाता देवता, ९२२ शुचिश्रेष्ठः—पवित्रोंमें श्रेष्ठ, ९२३ शङ्करः—सबका कल्याण करनेवाले शिवरूप, ९२४ रुद्रराट्—ग्यारह रुद्रोंके स्वामी, ९२५ गुरुः—गुरु नामसे प्रसिद्ध अङ्गिरापुत्र बृहस्पतिरूप, ९२६ विद्वत्तमः—सर्वश्रेष्ठ विद्वान्, ९२७ चित्ररथः—विचित्र रथवाले गन्धर्वोंके राजा, ९२८ गन्धर्वाग्र्यः—गन्धर्वोंमें अग्रगण्य चित्ररथरूप, ९२९ अक्षरोत्तमः—अक्षरोंमें उत्तम 'ॐ'कारस्वरूप ॥२८९॥

वर्णादिरग्र्यस्त्री गौरी शक्त्यग्र्या श्रीश्च नारदः ।
देवर्षिराट्पाण्डवाग्र्योऽर्जुनो वादः प्रवादराट् ॥२९०॥

९३०वर्णादिः—समस्त अक्षरोंके आदिभूत अकारस्वरूप, ९३१ अग्र्यस्त्री—स्त्रियोंमें अग्रगण्य सती पार्वतीरूप, ९३२ गौरी—गौरवर्णा उमारूप, ९३३ शक्त्यग्र्या—भगवान्‌की अन्तरङ्गा शक्तियोंमें सर्वश्रेष्ठ भगवती लक्ष्मीरूप,९३४ श्रीः—भगवान् विष्णुका आश्रय लेनेवाली लक्ष्मी, ९३५ नारदः—सबको ज्ञान देनेवाले देवर्षि नारदरूप, ९३६ देवर्षिराट्—देवर्षियोंके राजा, ९३७ पाण्डवाग्र्यः—पाण्डवोंमें अपने गुणोंके कारण श्रेष्ठ अर्जुनरूप, ९३८ अर्जुनः—अर्जुन नामसे प्रसिद्ध कुन्तीके तृतीय पुत्र, ९३९ वादः—तत्त्वनिर्णयके उद्देश्यसे शुद्ध नीयतके साथ किये जानेवाले शास्त्रार्थरूप, ९४० प्रवादराट्—उत्तम वाद करनेवालोंमें श्रेष्ठ ॥२९०॥

पावनः पावनेशानो वरुणो यादसां पतिः ।
गङ्गा तीर्थोत्तमो द्यूतं छलकाग्र्यं वरौषधम् ॥२९१॥

९४१ पावनः—सबको पवित्र करनेवाले, ९४२ पावनेशानः—पावन वस्तुओंके ईश्वर, ९४३ वरुणः—जलके अधिष्ठाता देवता वरुणरूप, ९४४ यादसां पतिः—जल-जन्तुओंके स्वामी, ९४५ गङ्गा—भगवान् विष्णुके चरणोंसे प्रकट हुई परम पवित्र नदी, जो भूतलमें भागीरथीके नामसे विख्यात एवं भगवद्विभूति है, ९४६ तीर्थोत्तमः—तीर्थोंमें उत्तम गङ्गारूप, ९४७ द्यूतम्—छल करनेवालोंमें द्यूतरूप भगवान्‌की विभूति, ९४८ छलकाग्र्यम्—छलकी पराकाष्ठा जूआरूप, ९४९ वरौषधम्—जीवनकी रक्षा करनेवाली श्रेष्ठ ओषधि—अन्नरूप ॥२९१॥

अन्नं सुदर्शनोऽस्त्राग्र्यं वज्रं प्रहरणोत्तमम् ।
उच्चैःश्रवा वाजिराज ऐरावत इभेश्वरः ॥२९२॥

९५० अन्नम्—प्राणियोंकी क्षुधा दूर करनेवाला धरतीसे उत्पन्न खाद्यपदार्थ, ९५१सुदर्शनः—देखनेमें सुन्दर तेजस्वी अस्त्र—सुदर्शनचक्ररूप, ९५२ अस्त्राग्र्यम्—समस्त अस्त्रोंमें श्रेष्ठ सुदर्शन, ९५३ वज्रम्—इन्द्रके आयुधस्वरूप, ९५४ प्रहरणोत्तमम्—प्रहार करनेयोग्य आयुधोंमें उत्तम वज्ररूप, ९५५ उच्चैःश्रवाः—ऊँचे कानोंवाला दिव्य अश्व, जो समुद्रसे उत्पन्न हुआ था, ९५६ वाजिराजः—घोड़ोंके राजा उच्चैःश्रवारूप, ९५७ ऐरावतः—समुद्रसे उत्पन्न इन्द्रका वाहन ऐरावत नामक हाथी, ९५८ इभेश्वरः—हाथियोंके राजा ऐरावतस्वरूप ॥२९२॥

अरुन्धत्येकपत्नीशो ह्यश्वत्थोऽशेषवृक्षराट् ।
अध्यात्मविद्या विद्याग्र्यः प्रणवश्छन्दसां वरः ॥२९३॥

९५९ अरुन्धती—पतिव्रताओंमें श्रेष्ठ अरुन्धती-स्वरूप, ९६० एकपत्नीशः— पतिव्रता अरुन्धतीके स्वामी महर्षि वसिष्ठरूप, ९६१ अश्वत्थः—पीपलके वृक्षरूप, ९६२ अशेषवृक्षराट्—सम्पूर्ण वृक्षोंके राजा अश्वत्थरूप, ९६३ अध्यात्मविद्या—आत्मतत्त्वका बोध करानेवाली ब्रह्मविद्या-स्वरूप, ९६४ विद्याग्र्यः—विद्याओंमें अग्रगण्य प्रणव रूप, ९६५ प्रणवः—ओंकाररूप, ९६६ छन्दसां वरः—वेदोंका आदिभूत ओंकार, अथवा मन्त्रोंमें श्रेष्ठ प्रणव॥२९३॥

मेरुर्गिरिपतिर्मार्गो मासाग्र्यः कालसत्तमः ।
दिनाद्यात्मा पूर्वसिद्धः कपिलः साम वेदराट् ॥२९४॥

९६७ मेरुः—मेरु नामक दिव्य पर्वतरूप, ९६८ गिरिपतिः—पर्वतोंके स्वामी, ९६९ मार्गः—मार्गशीर्ष (अगहन) का महीना, ९७० मासाग्र्यः—मासोंमें अग्रगण्य मार्गशीर्षस्वरूप, ९७१ कालसत्तमः—समयोंमें सर्वश्रेष्ठ-ब्रह्मवेला, ९७२ दिनाद्यात्मा—दिन और रात्रि दोनोंका सम्मिलित रूप—प्रभात या ब्रह्मवेला, ९७३ पूर्वसिद्धः—आदि सिद्ध महर्षि कपिलरूप, ९७४ कपिलः—कपिल वर्णवाले एक मुनि, जो भगवान्‌के अवतार हैं, ९७५ साम—सहस्र शाखाओंसे विशिष्ट सामवेद, ९७६ वेदराट्—वेदोंके राजा सामवेदरूप ॥२९४॥

तार्क्ष्यः खगेन्द्र ऋत्वग्र्यो वसन्तः कल्पपादपः ।
दातृश्रेष्ठः कामधेनुरार्तिघ्नाग्र्यः सुहृत्तमः ॥२९५॥

९७७ तार्क्ष्यः—तार्क्ष्य (कश्यप) ऋषिके पुत्र गरुड़रूप, ९७८ खगेन्द्रः—पक्षियोंके राजा गरुड़, ९७९ ऋत्वग्र्यः—ऋतुओंमें श्रेष्ठ वसन्तरूप, ९८० वसन्तः—चैत्र और वैशाख मास, ९८१ कल्पपादपः—कल्पवृक्षस्वरूप, ९८२ दातृश्रेष्ठः—मनोवाञ्छित वस्तु देनेवालोंमें श्रेष्ठ कल्पवृक्ष, ९८३

कामधेनुः—अभीष्ट पूर्ण करनेवाली गोरूप, ९८४ **आर्तिहाग्र्यः**—पीड़ा दूर करनेवालोंमें सर्वश्रेष्ठ, ९८५ **सुहृत्तमः**—परम हितैषी ॥२९५॥

चिन्तामणिर्गुरुश्रेष्ठो माता हिततमः पिता ।
सिंहो मृगेन्द्रो नागेन्द्रो वासुकिर्नृवरो नृपः ॥२९६॥

९८६ **चिन्तामणिः**—मनमें चिन्तन की हुई इच्छाको पूर्ण करनेवाली भगवत्स्वरूप दिव्य मणि, ९८७ **गुरुश्रेष्ठः**—गुरुओंमें श्रेष्ठ मातारूप, ९८८ **माता**—जन्म देनेवाली जननी, ९८९ **हिततमः**—सबसे बड़े हितकारी, ९९० **पिता**—जन्मदाता, ९९१ **सिंहः**—मृगोंके राजा सिंहस्वरूप, ९९२ **मृगेन्द्रः**—समस्त वनके जन्तुओंका स्वामी सिंहरूप, ९९३ **नागेन्द्रः**—नागोंके राजा, ९९४ **वासुकिः**—नागराज वासुकिरूप, ९९५ **नृवरः**—मनुष्योंमें श्रेष्ठ, ९९६ **नृपः**—मनुष्योंका पालन करनेवाले राजारूप ॥२९६॥

वर्णेशो ब्राह्मणश्चेतः करणाग्र्यं नमो नमः ।
इत्येतद्वासुदेवस्य विष्णोर्नामसहस्रकम् ॥२९७॥*

९९७ **वर्णेशः**—समस्त वर्णोंके स्वामी ब्राह्मणरूप, ९९८ **ब्राह्मणः**—ब्राह्मण माता-पितासे उत्पन्न एवं ब्रह्मज्ञानी, ९९९ **चेतः**—परमात्मचिन्तनकी योग्यतावाले चित्तरूप, १००० **करणाग्र्यम्**—इन्द्रियोंका प्रेरक होनेके कारण उनमें सबसे श्रेष्ठ चित्त—इस प्रकार ये सबके हृदयमें वास करनेवाले भगवान् विष्णुके सहस्र नाम हैं । इन सब नामोंको मेरा बारंबार नमस्कार है ॥२९७॥

यह विष्णुसहस्रनामस्तोत्र समस्त अपराधोंको शान्त करनेवाला, परम उत्तम तथा भगवान्‌में भक्तिको बढ़ानेवाला है । इसका कभी नाश नहीं होता । ब्रह्मलोक आदिका तो यह सर्वस्व ही है । विष्णुलोकतक पहुँचनेके लिये यह अद्वितीय सीढ़ी है । इसके सेवनसे सब दुःखोंका नाश हो जाता है । यह सब सुखोंको देनेवाला तथा शीघ्र ही परम मोक्ष प्रदान करनेवाला है । काम, क्रोध आदि जितने भी अन्तःकरणके मल हैं, उन सबका इससे शोधन होता है । यह परम शान्तिदायक एवं महापातकी मनुष्योंको भी पवित्र बनानेवाला है । समस्त प्राणियोंको यह शीघ्र ही सब प्रकारके अभीष्ट फल दान करता है । समस्त विघ्नोंकी शान्ति और सम्पूर्ण अरिष्टोंका विनाश करनेवाला है । इसके सेवनसे भयङ्कर दुःख शान्त हो जाते हैं । दुःसह दरिद्रताका नाश हो जाता है तथा तीनों प्रकारके ऋण दूर हो जाते हैं । यह परम गोपनीय तथा धन-धान्य और यशकी वृद्धि करनेवाला है । सब प्रकारके ऐश्वर्यों, समस्त सिद्धियों और सम्पूर्ण धर्मोंको देनेवाला है । इससे कोटि-कोटि तीर्थ, यज्ञ, तप, दान और व्रतोंका फल प्राप्त होता है । यह संसारकी जडता दूर करनेवाला और सब प्रकारकी विद्याओंमें प्रवृत्ति करानेवाला है । जो राज्यसे भ्रष्ट हो गये हैं, उन्हें यह राज्य दिलाता और रोगियोंके सब रोगोंको हर लेता है । इतना ही नहीं, यह स्तोत्र वन्ध्या स्त्रियोंको पुत्र और रोगसे क्षीण हुए पुरुषोंको तत्काल जीवन देनेवाला है । यह परम पवित्र, मङ्गलमय तथा आयु बढ़ानेवाला है । एक बार भी इसका श्रवण, पठन अथवा जप करनेसे अङ्गोंसहित सम्पूर्ण वेद, कोटि-कोटि मन्त्र, पुराण, शास्त्र तथा स्मृतियोंका श्रवण और पाठ हो जाता है । प्रिये ! जो इसके एक श्लोक, एक चरण अथवा एक अक्षरका भी नित्य जप या पाठ करता है, उसके सम्पूर्ण मनोरथ तत्काल सिद्ध हो जाते हैं । सब कार्योंकी सिद्धिसे शीघ्र ही विश्वास पैदा करानेवाला इसके समान दूसरा कोई साधन नहीं है ।

कल्याणी ! तुम्हें इस स्तोत्रको सदा गुप्त रखना चाहिये और अपने अभीष्ट अर्थकी सिद्धिके लिये केवल इसीका पाठ करना चाहिये । जिसका हृदय संशयसे दूषित हो, जो भगवान् विष्णुका भक्त न हो, जिसमें श्रद्धा और भक्तिका अभाव हो तथा जो भगवान् विष्णुको साधारण देवता समझता हो, ऐसे पुरुषको इसका उपदेश नहीं देना चाहिये । जो अपना पुत्र, शिष्य अथवा सुहृद् हो, उसे उसका हित करनेकी इच्छासे इस श्रीविष्णुसहस्रनामका उपदेश देना चाहिये । अल्पबुद्धि पुरुष इसे नहीं ग्रहण करेंगे । देवर्षि नारद मेरे प्रसादसे कलियुगमें तत्काल फल देनेवाले इस स्तोत्रको ग्रहण करके कल्पग्राम-(कलापग्राम) में ले जायँगे, जिससे भाग्यहीन लोगोंका दुःख दूर हो जायगा । भगवान् विष्णुसे बढ़कर कोई धाम नहीं है, श्रीविष्णुसे बढ़कर कोई तपस्या नहीं है, श्रीविष्णुसे बढ़कर कोई धर्म नहीं है और श्रीविष्णुसे भिन्न कोई मन्त्र नहीं है । भगवान् श्रीविष्णुसे भिन्न कोई सत्य नहीं है, श्रीविष्णुसे बढ़कर जप नहीं है, श्रीविष्णुसे उत्तम ध्यान नहीं है तथा श्रीविष्णुसे श्रेष्ठ कोई गति नहीं है । जिस पुरुषकी भगवान् जनार्दनके चरणोंमें भक्ति है, उसे अनेक मन्त्रोंके जप, बहुत विस्तारवाले शास्त्रोंके स्वाध्याय तथा सहस्रों वाजपेय यज्ञोंके अनुष्ठान करनेकी क्या आवश्यकता है ? मैं सत्य-सत्य कहता हूँ—भगवान् विष्णु सर्वतीर्थमय हैं, भगवान्

* पद्मपुराण, उत्तरखण्डका ७२ वाँ अध्याय ।

विष्णु सर्वशास्त्रमय हैं तथा भगवान् विष्णु सर्वयज्ञमय हैं।* यह सब मैंने सम्पूर्ण विश्वका सर्वस्वभूत सार-तत्त्व बतलाया है।

पार्वती बोलीं—जगत्पते! आज मैं धन्य हो गयी। आपने मुझपर बड़ा अनुग्रह किया। मैं कृतार्थ हो गयी, क्योंकि आपके मुखसे यह परम दुर्लभ एवं गोपनीय स्तोत्र मुझे सुननेको मिला है। देवेश! मुझे तो संसारकी अवस्था देखकर आश्चर्य होता है। हाय! कितने महान् कष्टकी बात है कि सम्पूर्ण सुखोंके दाता श्रीहरिके विद्यमान रहते हुए भी मूर्ख मनुष्य संसारमें क्लेश उठा रहे हैं।† भला, लक्ष्मीके प्रियतम भगवान् मधुसूदनसे बढ़कर दूसरा कौन देवता है। आप-जैसे योगीश्वर भी जिनके तत्त्वका निरन्तर चिन्तन करते रहते हैं, उन श्रीपुरुषोत्तमसे बड़ा दूसरा कौन-सा पद है। उनको जाने विना ही अपनेको ज्ञानी माननेवाले मूढ़ मनुष्य दूसरे किस देवताकी आराधना करते हैं। अहो! सर्वेश्वर भगवान् विष्णु सम्पूर्ण श्रेष्ठ देवताओंसे भी उत्तम हैं। स्वामिन्! जो आपके भी आदिगुरु हैं, उन्हें मूढ़ मनुष्य सामान्य दृष्टिसे देखते हैं; किन्तु प्रभो! सर्वेश्वर! यदि मैं अर्थ-कामादिमें आसक्त होने या केवल आपमें ही मन लगाये रहनेके कारण अथवा प्रमादवश ही समूचे सहस्रनामस्तोत्रका पाठ न कर सकूँ, तो उस अवस्थामें जिस किसी भी एक नामसे मुझे सम्पूर्ण सहस्रनामका फल प्राप्त हो जाय, उसे बतानेकी कृपा कीजिये।‡

महादेवजी बोले—सुमुखि! मैं तो 'राम! राम! राम!' इस प्रकार जप करते हुए परम मनोहर श्रीरामनाममें ही निरन्तर रमण किया करता हूँ। रामनाम सम्पूर्ण सहस्रनामके समान है।§ पार्वती! यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र भी प्रतिदिन विशेषरूपसे इस श्रीविष्णुसहस्रनामका पाठ करें तो वे धन-धान्यसे युक्त होकर भगवान् विष्णुके परमपदको प्राप्त होते हैं।÷ देवि! जो लोग पूर्वोक्त अङ्गन्याससे युक्त श्रीविष्णुसहस्रनामका पाठ करते हैं, वे श्रेष्ठ पुरुष अविनाशी पदको प्राप्त होते हैं। सुमुखि! बार-बार बहुत कहनेसे क्या लाभ; थोड़ेमें इतना ही जान लो कि भगवान् विष्णुका सहस्रनाम परम मोक्ष प्रदान करनेवाला है। इसके पाठमें उतावली नहीं करनी चाहिये। यदि उतावली की जाती है, तो आयु और धनका नाश होता है। इस पृथ्वीपर जम्बूद्वीपके अंदर जितने भी तीर्थ हैं, वे सब सदा वहीं निवास करते हैं, जहाँ श्रीविष्णुसहस्रनामका पाठ होता है। जहाँ श्रीविष्णुसहस्रनामकी स्थिति होती है, वहीं गङ्गा, यमुना, कृष्णवेणी, गोदावरी, सरस्वती और समस्त तीर्थ निवास करते हैं। यह परम पवित्र स्तोत्र भक्तोंको सदा प्रिय है। भक्तिभावसे भावित चित्तके द्वारा सदा ही इस स्तोत्रका चिन्तन करना चाहिये। जो मनीषी पुरुष परम उत्तम श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रका पाठ करते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त होकर श्रीहरिके समीप जाते हैं। जो लोग सूर्योदयके समय इसका पाठ और जप करते हैं, उनके बल, आयु और लक्ष्मीकी प्रतिदिन वृद्धि होती है। एक-एक नामका उच्चारण करके श्रीहरिको तुलसीदल अर्पण करनेसे जो पूजा सम्पन्न होती है, उसे कोटि यज्ञोंकी अपेक्षा भी अधिक फल देनेवाली समझना चाहिये। पार्वती! जो द्विज रास्ता चलते हुए भी श्रीविष्णुसहस्रनामका पाठ करते हैं, उन्हें मार्गजनित दोष नहीं प्राप्त होते। जो लोग भगवान् केशवके इस माहात्म्यका श्रवण करते हैं, वे मनुष्योंमें श्रेष्ठ, पवित्र एवं पुण्यस्वरूप हैं।

---

* नास्ति विष्णोः परं धाम नास्ति विष्णोः परं तपः। नास्ति विष्णोः परो धर्मो नास्ति मन्त्रो ह्यवैष्णवः॥
नास्ति विष्णोः परं सत्यं नास्ति विष्णोः परो जपः। नास्ति विष्णोः परं ध्यानं नास्ति विष्णोः परा गतिः॥
किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैः शास्त्रैः किं बहुविस्तरैः। वाजपेयसहस्रैर्वा भक्तिर्यस्य जनार्दने॥
सर्वतीर्थमयो विष्णुः सर्वशास्त्रमयः प्रभुः। सर्वक्रतुमयो विष्णुः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥
(७२। ३१३—३१६)

† अहो बत महत्कष्टं समस्तसुखदे हरौ। विद्यमानेऽपि देवेश मूढाः क्लिश्यन्ति संसृतौ॥ (७२। ३१८)

‡ कामाद्यासक्तचित्तत्वात्किन्तु सर्वेश्वर प्रभो। त्वन्मयत्वात्प्रमादाद्वा शक्नोमि पठितुं न चेत्॥
विष्णोः सहस्रनामैतत्प्रत्यहं वृषभध्वज। नाम्नैकेन तु येन स्यात्तत्फलं ब्रूहि मे प्रभो॥ (७२। ३३३-३३४)

§ राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे। सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥ (७२। ३३५)

÷ ब्राह्मणा वा क्षत्रिया वा वैश्या वा गिरिकन्यके। शूद्रा वाथ विशेषेण पठन्त्यनुदिनं यदि॥
धनधान्यसमायुक्ता यान्ति विष्णोः परं पदम्। ... ... (७३। १—३)

श्रीहरिः

प्रेमी ग्राहकोंसे—

'कल्याण'को अपनी ही प्रिय वस्तु समझकर आप इसके प्रचारमें जो प्रेमपूर्वक निःस्वार्थ सेवा कर रहे हैं, इसके लिये हम आपके हृदयसे कृतज्ञ हैं।

'कल्याण' इस समय प्रतिमास ९१,३०० छपता है। जहाँतक हमें पता है, भारतवर्षमें किसी भी भाषाके किसी भी पत्रकी ग्राहक-संख्या इतनी नहीं है। यह 'कल्याण'की सर्वप्रियताका प्रत्यक्ष और सुन्दर प्रमाण है।

वर्तमान वर्षके विशेपाङ्क—'संक्षिप्त पद्मपुराणाङ्क'से 'कल्याण'की ग्राहक-संख्या पहलेकी अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ी है, जिससे पता चलता है कि जनताने इसे बहुत पसंद किया है। भारतके प्राचीन और गौरवपूर्ण धार्मिक साहित्यके प्रति जनताकी यह अभिरुचि अवश्य ही अभिनन्दनीय है।

'संक्षिप्त पद्मपुराण' इस वर्षमें पूरा निकल जायगा। इस बार वार्षिक मूल्य केवल ४=) है; अतः प्रेमी महानुभावोंसे निवेदन है कि वे विशेष उत्साहपूर्वक ग्राहक बनने-बनानेकी चेष्टा करते रहनेकी कृपा करेंगे।

निवेदक—

व्यवस्थापक

Regd. No. A. 175.

श्रीहरिः

साधु-महिमा

महात्मानोऽनुगृह्णन्ति हिंसमानान् रिपूनपि ।
सपत्नीः प्रापयन्त्यब्धिं सिन्धवो नगनिम्नगाः ॥
सुजनो न याति विकृतिं परहितनिरतो विनाशकालेऽपि ।
छिन्नोऽपि चन्दनतरुः सुरभयति मुखं कुठारस्य ॥
दैवं परं विनश्यति तन्वपि न श्रीनिवेदितं सत्सु ।
अवशिष्यते हिमांशोः सैव कला शिरसि या शम्भोः ॥
ते साधवो भुवनमण्डलमौलिभूता ये साधुतामनुपकारिषु दर्शयन्ति ।
आत्मप्रयोजनवशात्कृतछिन्नदेहपूर्वोपकारिषु खलोऽपि हितानुरक्तः ॥

(पद्म० उत्तर० ८ । २२—२५)

महात्मालोग हिंसा करनेवाले शत्रुओंपर भी कृपा ही करते हैं । पर्वतोंसे निकलकर बहनेवाली बड़ी-बड़ी नदियाँ अपनी सौतरूप सहायक नदियोंको भी समुद्रसे मिला देती हैं । परोपकारव्रती सत्पुरुष मरते समय भी अपने स्वभावका परित्याग नहीं करते अर्थात् दूसरोंका हित ही करते हैं । चन्दनका वृक्ष काटे जानेपर भी काटनेवाली कुल्हाड़ीकी धारको सुगन्धित कर देता है । प्रारब्धकर्मका चाहे बिना भोगे ही क्षय हो जाय—जो असम्भव है; परन्तु जो वस्तु सत्पुरुषोंको अर्पण कर दी जाती है; वह स्वल्प होनेपर भी अक्षय हो जाती है । चन्द्रमाकी जो कला भगवान् शंकरके मस्तकपर सुशोभित होती है, वह बच जाती है—उसका क्षय नहीं होता । वे ही सत्पुरुष त्रिभुवनमें श्रेष्ठ हैं, जो उपकार न करनेवालोंके साथ भी साधुताका ही आचरण करते हैं । अपने लिये अङ्गोंको कटा देनेवाले पहलेके उपकारीके प्रति तो दुष्ट पुरुष भी हित और प्रेमका ही बर्ताव करते हैं ।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥
जयति शिवा-शिव जानकि-राम। जय रघुनन्दन जय सियाराम॥
रघुपति राघव राजा राम। पतितपावन सीताराम॥
जय जय दुर्गा जय मा तारा। जय गणेश जय शुभ-आगारा॥

विषय-सूची

कल्याण, सौर मार्गशीर्ष २००९, नवम्बर १९५२

चित्र-सूची

तिरंगा

वार्षिक मूल्य भारतमें ७॥) विदेशमें १०) (१५ शिलिङ्ग)

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत् चित् आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

साधारण प्रति भारतमें ।≡) विदेशमें ॥–) (१० पेंस)

सम्पादक—हनुमानप्रसाद पोद्दार, चिम्मनलाल गोस्वामी, एम्० ए०, शास्त्री
मुद्रक-प्रकाशक—घनश्यामदास जालान, गीताप्रेस, गोरखपुर